लखनऊ की नवाबी

1906

लखनऊ के शाही महलात।

लखनऊ की नवाबी

सचित्र

सच्चा ऐतिहासिक वृत्तांत

प्रथम खण्ड।

ठाकुरप्रसाद खत्री,
-विज्ञानकोष, रासायनिककोष, भुगर्भ विद्या, ज्योतिषप्रबन्ध,
हमारी प्राचीन ज्योतिष, इत्यादि के
ग्रन्थकर्ता।

Printed at the L. P. Kashi.—1906.
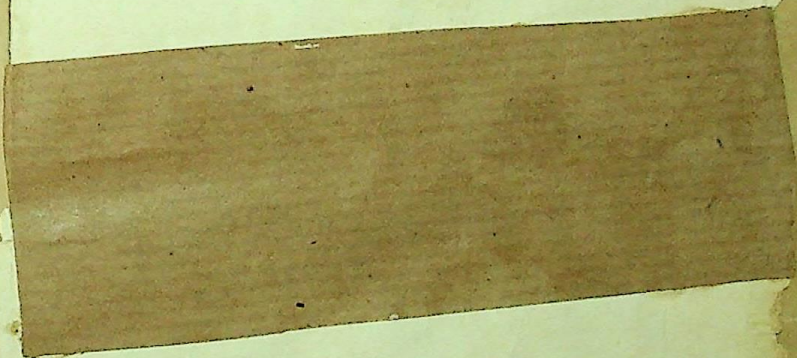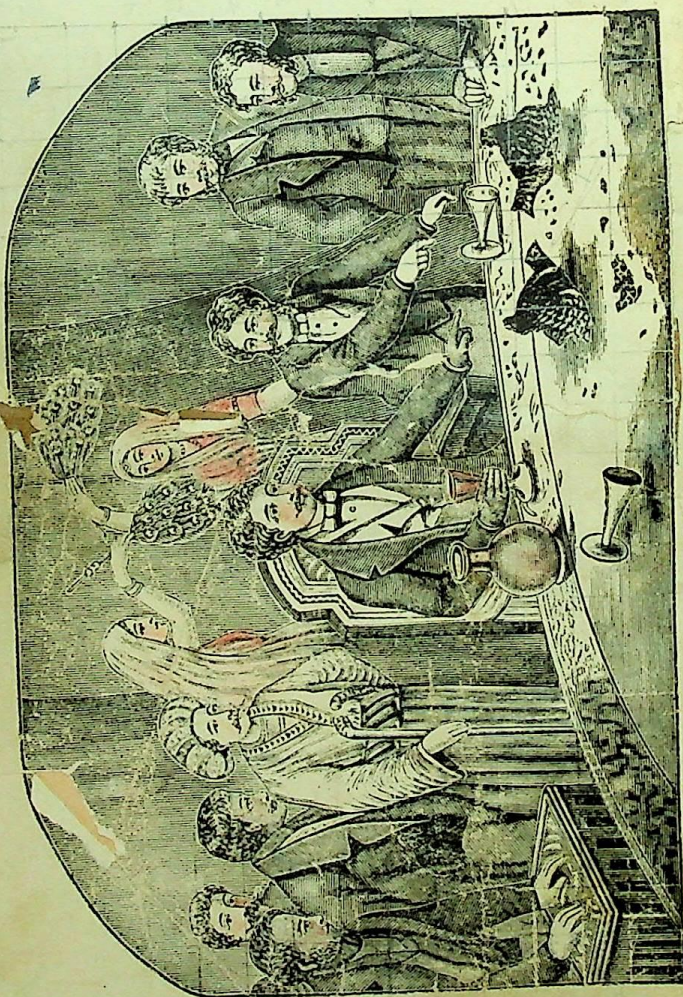
लखनऊ की नवाबी

अनुमान बीस वर्ष से कुछ अधिक हुए होंगे कि मैं किसी अपने निज कार्य के लिए लखनऊ गया था और उस समय वहां की राजगद्दी पर बादशाह ग़ाज़ीउद्दीन का बेटा नसीरुद्दीन विराजमान था।

इसके पूर्व जब मैं कलकत्ते में था तब मैं लखनऊ की निराली बातें, नव्वाब साहब के अनूठे रंग ढंग, उनका उन फ़िरंगियों पर जो कम्पनी * के नौकर न थे, अधिक चाव तथा उन का आदर और उनकी बड़ी भारी पशुशाला (जानवर खाने) का बहुत कुछ वर्णन सुन चुका था। यह भी मुझे विदित हो चुका था कि लखनऊ के रहने वाले बड़े बांके और लड़ाके होते हैं तथा वहां के लोग गली कूचों में ढाल, तल्वार, बरछी, पिस्तौल, बन्दूक इत्यादि बांधे खुले बन्दों घूमा करते हैं। और भी बहुत बातें मैं सुन चुका था, परन्तु इनमें से प्रायः अनेक [illegible] ठीक२ होने में मुझे संदेह होता था; अतः कुछ बातों [illegible] गप्प ही समझ लिया था, परन्तु मेरा यह अनुमान सर्वथा [illegible]

* यह वर्णन सन् १८३५ ई० के लगभग का है जब कि हिन्दुस्थानमें [illegible] राज्य का उदय हो चुका था और यह कम्पनी बहादुर का [illegible] निकहलाता था।

मिथ्या ठहरा। क्योंकि जब मैंने यहां आकर अपनी आंखों से देखा तो जोकुछ पहिले सुना तथा अनुमान किया हुआ था, उससे उसको कहीं चढ़ा बढ़ा पाया।

सब से पहिले तो मुझे उस राजमन्दिर को ही देखकर एक अचम्भा सा हो आया, जो बादशाही महल (शाहमहल) कहलाता है। यह राजमन्दिर केवल एकही भवन मात्र न था, किंतु एकही में अनेक भवनों की श्रेणी, की श्रेणी गोमती के तीर तीर कुछ दूर तक चली गई थी। अवध के बादशाही महलों की यह बनावट, कुस्तुन्तुनिया के हरम, तेहरान के ख़ां के महल तथा पेकिन के राजभमन्दिरों के समान थी। क्योंकि एशिया के देशों में शाही महल केवल बादशाहों के रहने के ही लिये नहीं होते, किन्तु उनमें ऐसे स्थान भी बने रहते हैं कि जिनमें राज्य सम्बन्धी सम्पूर्ण कार्य्य हो सकें। बादशाह की बेगमों के रहने के अन्तःपुर, लौंडी, गुलामों के रहने के स्थान, सभाभवन (दरबारी इमारतें) तथा और अनेक भांति के राजगृह इत्यादि उन्हीं के अन्तर्गत होते हैं। इसी के भीतर राज्यकर्मचारियों के गृह, निवासस्थान आदि तथा पुष्प बाटिकाएं, सरोवर, फौव्वारे और आंगन भी बने रहते हैं। ठीक ऐसीही अवस्था उस समय लखनऊ के शाही महलों की भी थी। गोमती नदी (जो लंदन शहर की साधारण सड़क से अधिक चौड़ी न[illegible]) के एक तट पर शाही महल और दूसरे तट पर एक रम[illegible] जिसमें बादशाही पशुशाला बनी हुई थी। इसमें इतनी [illegible] पशु, पक्षी और अन्य जन्तु एकत्रित किये गए थे कि [illegible] गिन्ती वा अनुमान करना भी कठिन है। इस पूर्वोक्त शा[illegible]

सैंकड़ों हाथी, शेर, चीते, गैंडे, तेंदुवे, चीतल, हिरन, पाढ़े, बन-बिलाव, ईरानी बिल्लियां, चीनी कुत्ते, इत्यादि इत्यादि, कुछ खुले घूमते और कुछ पिंजरों में बन्द थे और कुछ पशु रमने की हरी हरी घास चरते फिरते थे, मानों लन्दन के खेतों में गाय तथा भेड़ों के झुण्ड चर रहे हों।

यद्यपि उक्त महलों का नाम 'फरहत बख्श' था, तथापि उन महलों के बाहरी ओर से कोई भी बात उनके महत्व और चमत्कारिता की नहीं देख पड़ती थी। इन भवनों की कारीगरी इत्यादि से, मुझे उनकी प्रशस्तता देखकर, अधिकतर आश्चर्य हुआ, क्योंकि मैं उस समय तक यही समझा हुआ था कि इन महलों में बड़ी अनूठी कारीगरियों के काम बने होंगे, परन्तु ये भवन इतने प्रशस्त तथा इतने बड़े बड़े हैं, इसका तो मुझे गुमान भी न था।

लखनऊ की गलियों को देखकर भी मेरी कल्पना भङ्ग नहीं हुई। बिशप वेबर साहब ने उन महलों के चारों ओर की गलियों की 'ड्रेसडन' की गलियों से उपमा दी है, किसी किसी विदेशी ने लखनऊ को "मासको" शहर के सदृश भी बताया है। यद्यपि मैंने इन दोनों नगरों को नहीं देखा है, तथापि मैं अनुमान कर सकता हूं कि ये दोनों नगर इसकी सादृश्यता न प्राप्त कर सकेंगे अर्थात् इनकी उपमा इस शहर के लिये कदापि उपयुक्त न होगी। हां, 'कैरो' एक बड़ा नगर है, जो ईजिप्ट की राजधानी है, उसे मैंने ऐसाही देखा है कि जिसकी सकरी गलियां, बाजार और उनमें लदेफंदे ऊंटों का आना जाना, लखनऊ के निचले बाजार केही सदृश है। इस नगर की उपमा चाहे

आपलोग ड्रेसडन, मास्को, कैरो आदि से दें, परन्तु वस्तुतः लखनऊ कीसी अनूठी रचना कदाचित और किसी नगर में न पाई जायगी ।

प्रथम तो यह कि लखनऊ के से हथियारबन्द मनुष्य, उन नगरों में कहीं देख भी न पड़ेंगे । हां, मास्को के निवासी छुरी बांधते हैं और काहरा (Cairo) नगर के लोग भी कभी २ हथियारबन्द दिखाई पड़ जाते हैं, परन्तु लखनऊ में तो प्रत्येक व्यक्ति हथियार बांधेही रहता है । येलोग तोड़ेदार बन्दूक, पिस्तौल, कड़ाबीन, ढाल, तलवार बांधे फिरा करते हैं, यहां तक कि कामकाज करनेवाले, दुकानदार, आदि भी तलवार अवश्य ही पास रखते हैं । सिवाय इनके अनुद्यमी तथा दरिद्र लोग भी, चाहे उनके तन पर वस्त्र भी न हों, पर कम से कम कड़ाबीन वा ढाल तलवार इत्यादि कोई न कोई एक हथियार अवश्य ही रखते हैं । भैंसे की खाल से मढ़ी हुई ढाल, जिसमें पीतल के फूल लगे होते हैं, उनके बाँएँ कंधे पर अवश्य लटकी रहती है । बड़ी बड़ी मोछों वाले कल्लेथल्ले के रजपूत और पठान लोग तथा काली दाढ़ी वाले मुसल्मान ढाल तलवार से सुसज्जित, ऐंठते पैंठते, घूमते फिरते देख पड़ते हैं, स्पष्ट ज्ञात होता है कि लखनऊ के निवासी अत्यन्त बाँके तिरछे, घमण्डी और लड़ाके हैं । अब यहां के लोग क्यों ऐसे रहते हैं, इसपर आश्चर्य्य न करना चाहिये, क्योंकि इसी अवध प्रान्त के लोग कम्पनी बहादुर की पलटनों में प्रायः भरती होते हैं । फिर बङ्गाल की कम्पनी में तो विशेषतः अवध केही लोग नियुक्त हैं ।

इस लखनऊ के निवासियों को बचपन सेही शस्त्रों के

प्रयोग का उत्साह दिलाया जाता तथा उनका अभ्यास कराया जाता है। तीर, कमान और बर्छी तो यहां के बालकों के खेल की वस्तुएं हैं। काठ की बनी छोटी २ तलवारें और कड़ाबीनें यहां के लड़कों को खेलने के लिये वैसेही दीजाती हैं जैसे अंग्रेज़ी दाइयां प्रायः बच्चों के हाथ में झुंझुने खेलने को पकड़ा दिया करतीं हैं।

मेरी दृष्टी में इस नगर के गली कूचों की सैर एक निराले ही ढङ्ग की थी, मुझे जान पड़ता था कि मैं घूमता फिरता एक अनोखे देश में आनिकला हूं कि जहां के साधारण मनुष्य भी सब शूर बीरही हैं। इन मनुष्यों की चालढाल सेही बाँकापन और बीरता टपकी पड़ती है कि जिसका वर्णन मैंने किस्से और कहानियों की पुस्तकों में बचपन में पढ़ा था।

कैरो वा मास्को में बोझ से लदे हुए हाथी कदापि न देख पड़ेंगे, क्योंकि सकरी और पतली गलियों में ऐसे भारी भरकम पशुओं के चलने फिरने से अधिक उपहासयुक्त और बेढङ्गी बात कौनसी हो सकती है? कैरो नगर में जैसे लदेफंदे ऊंटों के बोझ दोनों ओर से गली को छेंक लेते हैं, वैसेही यहां की गलियों को हाथियों के डीलडौल मात्रही रोक लेते हैं। लखनऊ में हाथी तथा ऊंट दोनोंही की बहुतायत है। यहां के बाजार बड़े गन्दे हैं। इनमें घोड़े तो कभी २ दिखाई देजाते हैं, परन्तु हाथी और ऊंट बहुधा देखे जाते हैं। इन छोटी और तङ्ग गलियों में हाथी और लदेफंदे ऊंटों को देखकर तो चिरकाल तक मैं अपनी हँसी को रोकने में असमर्थ था और यही जी चाहता था कि पेटभर हँसूं, यद्यपि वहां मुझे अपने इस कर्म

से शरीर रक्षा की भी चिन्ता होजाती थी।

यहां के हिन्दू और मुसल्मान यद्यपि हथियार तो एकही से बांधते हैं, तथापि वे अन्यान्य व्यवहारों में एक दूसरे से भिन्न हैं। लखनऊ की बस्ती ३००००० तीन लाख मनुष्यों की है, इनमें से दो तिहाई हिन्दू हैं, जिनमें अधिकतर नीच जाति के हैं और शेष एक तिहाई मुसल्मान हैं, जो वहां के नवाब और उमराव कहे जाते हैं, क्योंकि यहां की राजगद्दी मुसल्मानों की है। जिस देश की राजधानी यह लखनऊ है, उसके विषय में। कदाचित कुछ लोग अनभिज्ञ हों अतः उसके विषय में संक्षेपतः कुछ वर्णन करना उचित और आवश्यक जान पड़ता है। हम (अंगरेज़) लोग इसे 'शाह अवध की चटनी' तथा 'औलीदौली बादशाहत' कहा करते हैं और इसी का वर्णन चार्ल्स ओमोरली ने बड़े टूमटाम के साथ किया है।

लार्ड वेलसली जब बड़े लाट होकर हिन्दुस्थान में आये थे, उस समय अवध का राज विस्तार में इंग्लैण्ड से भी बड़ा था। प्रथम यह मुगल वंशी राज्य का एक सूबा था और जो इसका प्रबन्धकर्ता होता था, वह "नवाब वज़ीर" कहलाता था। वारन्हेस्टिङ्ग्ज़् ने जो वहां के नवाब वंश की दो बेगमों को लुटवा दिया था और उनके ख़ाजासराओं को पीड़ा देकर उनका धन अत्याचार से हरण कर लिया था, इस हेतु से अवध के नवाब का वृत्तान्त इंग्लैण्डवासियों को मिल चुका था क्योंकि बर्क साहब ने हेस्टिंग्ज़ के बर्ताव की बियाड़ बड़ी धूमधाम के साथ की थी और इंग्लैण्डवासियों का अनुमान था कि अवध के नव्वाब पर बड़ा ही अन्याय हुआ है तथा उसको अत्यन्त

पीड़ा दीगई है । परन्तु वस्तुतः बात यह थी कि उक्त नव्वाब को अपने पूर्वजों की विधवा बेगम के, जिसका नाम 'बहूबेगम' इत्यादि था, लुट जाने से अत्यन्त प्रसन्नता हुई थी, नव्वाब साहब को कुछ भी दुःख नहीं उठाना पड़ा था, क्योंकि वह पहिले नव्वाब के पालट बेटा थे ।

जैसा कि पूर्व में लिखा जा चुका है कि जब लार्ड वेलस्ली हिन्दुस्थान में आये थे, उस समय अवध का सूबा इंगलिस्तान से बड़ा था और वहां के नव्वाब अङ्गरेज़ों के मित्र तथा सच्चे साथी थे। लाट साहब ने इस सहृदयता का पुरस्कार यह दिया कि अवध के सूबे का आधाभाग, जो बहुतही उपजाऊ था, लेकर बङ्गाल के सूबे में मिला लिया। लाट साहब के मतानुसार ऐसे सच्चे मित्र के साथ ऐसा बर्ताव करने तथा उसके आधे सूबे को अपने राज्य में मिला लेने से बढ़कर दूसरा कोई उत्तम बर्ताव नहीं जान पड़ा था * ।

मार्क्विस आफ़ हेस्टिंग्ज़ ने नव्वाब गाज़ीउद्दीन हैदर से दो करोड़ रुपये कर्ज़ लिये और उसके बदले में नव्वाब साहब को वह ऊसर भूमि दी, जो हिमालय पर्वत के नीचे है और तराई कहाती है, यह नैपाल राज्य से छीन लीगई थी। सिवाय इसके,

---

* यह जो वृत्तान्त लिखा जाता है यह सब ऐतिहासिक घटना है। एक इतिहास लेखक अवध के सूबे को सरकारी राज्य में मिलाने का वर्णन करती समय यों लिखते हैं "इसमें सन्देह नहीं है कि वारन्-हेस्टिंग्ज़्, लार्ड टेनमाउथ, लार्ड वेलेस्ली, लार्ड हेस्टिंग्ज़् और लार्ड आकलेण्ड अपनी गुप्त जीवनी में कदापि ऐसा अन्याय न करते, जैसा जैसा कि उन्होंने लाट पदाधिकारी होकर किया ।" देखो कलकत्ता रिव्यू, भाग ३, पृष्ट ३७६ ।

नव्वाब साहब को बादशाह का खिताब भी दिया था अर्थात् "हिज़ हाइनेस नव्वाब" के बदले "हिज़ मैजिस्टी दि किंग" का पद वह पागए । बेचारे गाज़ीउद्दीन हैदर ने इसीपर सन्तोष कर लिया, अथवा उनको करना ही पड़ा ।

सन् १८१९ ई० में, कम्पनी ने गाज़ीउद्दीन का यों राज्याभीषेक किया था (सच तो यों है कि चूना लगाया था), और सन् १८२७ ई० में, उनका बेटा नसीरउद्दीन राजगद्दी पर बैठा। यह इनकी युवाऽवस्था थी और जब मैं लखनऊ में था, उस समय इनकी ३० वर्ष की उम्र थी ।

जिस समय का यह वृत्तान्त लिखा जाता है, उस समय अवध के राज्य का त्रिकोण स्वरूप, अङ्गभङ्ग और लुंडमुंड हो रहा था, जोकि नैपाल की तराई से लेकर गङ्गा के तट पर्यन्त चला गया है । इस सूबे का वीस्तृत भाग उत्तर में नैपाल की सीमा से मिला हुआ है और ऊपरी संकुचित भाग दक्खिन में गङ्गाजी के तट से लगा है । इस देश की भूमि पश्चिमोत्तर से पूर्वदक्षिण की ओर को ढालवीं है । इसकी सबसे ऊंची भूमि वह देश है, जिसे मार्क्विस आफ़ हेस्टिंग्ज़् ने नैपाल युद्ध के उपरान्त नैपाल राज्य से छीन कर नवाब को अर्पण कर दिया था । यह तराई केवल हिंसक पशुओं और निविड़ बन से परिपूर्ण है । इस तराई में यदि बस्ती है तो पशुओं की और सम्पत्ति है तो जङ्गल की।

एवं जो लाट आते गए वे अवध के अमूल्य प्रांतों की काट छांट और छीन झपट कर, तथा रुपयों की लूट और खसोटा खसाटी करके उसे खुक्खल करते गए । इसकी बस्ती आस्ट्रिया तथा प्रशिया देश को छोड़ कर पूर्व जर्मन राज्य के किसी सूबे से

अधिक बसी हुई है। इस सूबे का फैलाव, डेन्मार्क, स्विट्ज़र-लैण्ड, सैक्सनी, वटनवर्ग, हालैण्ड, और बेल्जियम से अधिक-तर है। यदि यह सूबा योरोप में होता, तो उन सब सूबों का मुकुटमणि गिना जाता और बवेरिया तथा नेपल देश से टक्कर मारता। परन्तु एशिया महाद्वीप में यह एक अत्यन्तही छोटा सूबा गिना जाता है, जिसके विषय में यहां (इंग्लिस्तान में) इतनी चर्चा होती रहती है।

मैं पूर्वही कह चुका हूं कि मैं अपने निज कार्य्यवश लखनऊ गया था। मैं वहां व्यापार करने गया था, न केवल भ्रमण के हेतु, जिसे कि प्रतिष्ठित कम्पनी उस समय घृणा दृष्टि से देखती थी। केवल यह देखने के अभिप्राय से कि हिन्दुस्थान के बादशाह कैसे होते हैं, मैंने अपने एक मित्र से, जो वहां के दरबारियों में थे इस विषय की प्रार्थना की थी और उन्हीं के द्वारा मुझे दरबार में जाने का सौभाग्य भी प्राप्त हुआ था। जब से दिल्ली की बादशाहत का ठाठ और वैभव नष्ट हो, छिन्नभिन्न और पंजर मात्र रहगया, तब से अवध की टक्कर का कोई भी हिन्दु-स्थानी राज्य शेष न रहगया था। मैंने रेज़िडेण्ट के द्वारा दरबार में प्रवेश नहीं किया था, इस हेतु बादशाह ने मुझसे अत्यन्त हितपूर्वक बर्ताव किया था। अवध में अंगरेज़ी राज्य की ओर से जो एक अंगरेज़ कर्मचारी रहता है, वह रेज़िडेण्ट कहलाता है। मुझे इस बात की सुनगुन लग चुकी थी कि बादशाह के निज कर्मचारियों में से एक का स्थान खाली है और यदि मैं बादशाह की सेवा में उपस्थित होकर नजर दूं, तो उसके स्वीकृत होजाने पर, मैं उस पद पर उनकी सेवा में नियुक्त होजाऊंगा।

२

परन्तु रेज़िडेण्ट साहब की आज्ञा प्राप्त किए बिना, कोई योरोप निवासी बादशाह की नौकरी नहीं करने पाता था। अतः मेरी दूसरी चेष्टा उनकी आज्ञा प्राप्त करने की हुई और बडे साहब से मेरी मुलाक़ात कराई गई। लण्डन में तो ये 'बड़े साहब' एक सामान्य व्यक्ति गिने जाते हैं, परन्तु यहां तो इनको अवध के राज्य और उसकी ५००००० प्रजा पर, इंगलैण्ड के बादशाह से भी बढ़कर, अधिकार प्राप्त है। सारांश यह कि मैं उक्त "बड़े साहब" से मिला, तथा मेरे और उनके बीच में कुछ पत्र व्यवहार भी हुए; अन्त में उनकी सम्मति इन नियमों पर ठहरी कि मैं कभी और किसी प्रकार भी अवध के राज्यकाज विषय में हस्तक्षेप न करूं, न मैं कभी कुमंत्रणा दूं और जो कुछ वार्ता, दो राज्य कर्मचारियों अथवा दो ज़मींदारों में खींचतान की हो, उसमें मैं सम्मलित न होऊं, और न मैं किसी राज्यकीय व्यवहार में बोलूं। इन नियमों के स्वीकार करने पर, मुझे वहां के दरबार में नौकरी करने की आज्ञा दीगई।

जब यह सब बातें निश्चित होगई, तब मुझे पुनः निज रीति के अनुसार,बादशाह की सेवा में उपस्थित होना पड़ा। एशियाई बादशाहों की सभा में रिक्तपाणि कोई नहीं जा सकता, कोई न कोई वस्तु भेंट देने के लिये लेजानी पड़ती है यद्यपि उसके बदले में दरबार से अन्यान्य रूप में उससे कहं बढ़कर पुरस्कार वा ख़िलअ़त मिल जाती है। प्रथम बेर, जब मैं बादशाह की सेवा में गया था, उस समय पूरा दरबार लगा हुआ था और मैंने बादशाह सलामत को एक बड़े कमरे में,एक उत्तम

सिंहासन पर विराजमान देखा था। मैं समझता था कि वे एक सिंहासन पर पलथी मारे बैठे होंगे, परन्तु ध्यान पूर्वक जब मैंने देखा तो वे एक सुनहरी और जगमगी जड़ाऊ कुरसी पर बड़ी भारी हिन्दुस्थानी पोशाक पहिने विराजमान थे और उनके रत्न जटित मुकट पर, जो वे मस्तक पर धारण किये हुए थे, हुमा पक्षी के परों का तुर्रा लगा था। मेरे अनुमान के विरुद्ध, उनका पहिनावा तथा इस राज्यगृह की सजावट अधिकतर अंगरेज़ी रीति की थी। इस अवसर पर तो मैं इन सभों की देखभाल भली भांति न कर सका, बादशाह के स्वरूप को भी यथार्थ रीति से अवलोकन न कर सका था, परन्तु दूसरी बेर जब मैं अपनी निज भेंट करने गया, तब मैंने देखा कि बादशाह सलामत अपने निज अंगरेज़ सेवकों के सहित, एक वाटिका में टहल रहे हैं।

मैं एक किनारे खड़ा होगया और पांच मोहरें उनकी भेंट कीं जोकि एक रेश्मी रूमाल पर धरी थीं और वह रूमाल दाहिने हाथ पर था और उस हाथ के नीचे बायां हाथ था। इस प्रकार मैं बादशाह की अपेक्षा में खड़ा रहा और यही मेरा राज्य सम्बन्धी शिष्टाचार सीखने का प्रथम अवसर था। जब मैं अपने इस प्रकार खड़े रहने पर विचार करता था, तब मैं अपने तईं एक भकुआ सा प्रतीत होता था। मेरी टोपी समीपही एक कुरसी पर रक्खी थी और मैं नंगे सिर खड़ा था। उस दिन धूप और गरमी भी अधिक थी। जब तक बादशाह सलामत आवें, तब तक मैं पसीने से नहा गया। अन्त को बादशाह सलामत अपने निज गण समेत धीरे २ मेरे पास आगए। इस समय, वे

काले रङ्ग की अंगरेजी पोशाक पहिने हुए थे श्रोर सिर पर भी अंगरेज़ीही टोपी शोभायमान थी। इनका मुखारबिन्द सीप के समान गोर वर्ण श्रोर अत्यन्त हँसमुख था। इनकी भ्रमर सी काली २ अलकावली, तथा मूंछ श्रोर गलमुच्छे, उन गोरे २ गुलाबी कपोलों पर अतीव शोभा दे रहे थे। इनकी आंखें छोटी, चमकीली श्रोर काली थीं, शरीर फरहरा श्रोर कद न बहुत नाटा श्रोर न लम्बा था। जब वे मेरे निकट पहुंचे, उस समय वे अंगरेज़ी भाषा में अपने मुसाहबों से बात चीत कर रहे थे। यद्यपि मैंने उस समय उनकी सब बातें सुनी थीं, परन्तु अब उनका कुछ भी स्मरण नहीं आता, कारण यह कि उस समय मैं अपनेही सोचों में मग्न था, अतः उनकी बातों पर मेरा ध्यान स्थिर न रह सका।

बादशाह सलामत जब मेरे समीप आये, तो मुझे देखकर मुसकराये श्रोर अपना बायां हाथ मेरे हाथों के नीचे रखकर, दाहिने हाथ की अंगुलियों से मेरी भेंट की मोहरों को छुआ श्रोर बोले "तुमने मेरी नैाकरी करने का निश्चय तो कर लिया न?"

मैंने उत्तर दिया 'जी श्रीमान्।'

इसपर वे फिर बोले "मैं अंगरेजों से अत्यन्त स्नेह रखता हूं। अब हम दोनों में गाढी पटेगी"

इतना कहकर अपने मुसाहबों से बातचीत करते हुए, बादशाह सलामत आगे बढ़े श्रोर मैं भी उनके पीछे पीछे हो लिया।

मेरे एक मित्र ने मुझसे कान में कहा, "मोहरें जेब में रख लो, नहीं तो कोई हिन्दुस्थानी सेवक लेलेगा।" यह सुनतेही

मैंने चट मोहरें जेब में डाल लीं और अपनी टोपी उठा कर उनके सायर महल में चला गया।

महल के कमरे बड़े प्रशस्य थे और उन में उत्तमोत्तम कन्दीलें, झाड़, फ़ानूस, हांडियां तथा चित्रविचित्र, भड़कदार चौखटों में जड़े हुए अनेक चित्र चारों ओर लग रहे थे। सच तो यों है कि प्रत्येक कमरे में नाना भांति की वस्तुएं इतनी बहुतायत से सुसज्जित थीं कि जिन्हें देखकर दर्शक की दृष्टि कदापि तृप्त नहीं होती थी और मैं तो उन्हें देखकर घबरा उठा था। जगमगाते-झाड़ और कन्दीलें, दुर्लभ काष्ठ और हाथी-दांत आदि की बनी, मनोहर और अपूर्व अलमारियां और मेज़, अनूठे हथियार जिनमें रत्नखचित मुट्ठे लगे थे, जड़ाऊ और मीनाकारी की हुई ढालें, भांति भांति के अमूल्य कवच इत्यादि, इस बहुतायत से सजे थे कि जिन्हें देखकर आंखें चौंधियाई जाती थीं। महल के इन कमरों में से वेही कमरे कुछ सादे और साधारण सजे हुए थे जिनमें बादशाह सलामत एकांत में वा अपने सखागणों के सहित भोजन करते थे। इन कमरों में घनी सजावट न थी, किन्तु ये अंगरेज़ी रीति के अनुसार साधारण रूप से सुसज्जित थे।

प्रतिमास एक बेर दरबार की ओर से अङ्गरेज़ी सेना-नायकों की जेवनार होती थी, जिसमें वे लोग अपनी २ सेनाओं से, जो गोमती के उस पार ५ मील पर रहती थी, आया करते थे और कभी कभी पबलिक डिनर अर्थात् सब लोगों की जेवनार भी होती थी, जिसमें रेज़िडेंट और उनके दल के लोग भी सम्मिलित हुआ करते थे। परन्तु इसमें बादशाह

सलामत को कष्ट उठाना पड़ता था, क्योंकि इन जेवनारों से छुटकारा पाने पर, मैंने उन्हें यह कहते सुना है कि "हे भगवन्, तेरी कृपा से यह झंझट भी समाप्त हुई और वे लोग प्रसन्नता पूर्वक विदा हुए। अब लाओ एक पात्र मद का दो। बाप रे बाप! इसमें भी कितना सिर खप्पन करना पड़ता है।" ऐसा कहते हुए वह अङ्गड़ाई लेते वा खड़े होजाते थे और अपना रत्न जटित मुकुट उतार कर कमरे के एक कोने में अल्हड़पन से फेंक देते थे।

जिस दिन मैं पहिले पहिल महल में गया था, उसी दिन बादशाह की ओर से हमलोगों की जेवनार थी। इसमें बादशाह के ५ फ़िरङ्गी मुसाहिब रहते थे। इन्हीं में बादशाह का अङ्गरेज़ी पढ़ाने वाला मास्टर भी था। बादशाह ने कई बेर इस बात की प्रतिज्ञा की थी कि प्रति दिन एक घंटा अवश्य अङ्गरेज़ी पढ़ा करेंगे, क्योंकि वेग से अङ्गरेज़ी बोलने की उन्हें अत्यन्तही उत्कण्ठा थी। अतएव अङ्गरेज़ी बोलते समय प्रायः उन्हें हिन्दुस्थानी शब्दों का प्रयोग करके काम निकालना पड़ता था। मैंने कई बेर उक्त मास्टर साहब के सम्मुख मेज़ पर अङ्गरेज़ी पुस्तकें रक्खी तथा बादशाह को बैठे हुए देखा है। वे अपने पढ़ाने वाले को 'मास्टर साहब' कहकर पुकारते थे।

'आइये मास्टर साहब, आइये, हम सब अपना पाठ पढ़ें,' वह प्रायः योंही कहा करते थे।

पहिले मास्टर साहब 'स्पेक्टेटर' वा किसी उपन्यास की कुछ पंक्तियां पढ़ जाते और बादशाह उन्हें दोहरा जाते थे, फिर मास्टर साहब आगे पढ़ने लगते, और जब उनके दोहराने

की पारी आती, तब बादशाह सलामत यों कहने लगते "अरे बापरे बाप! यह तो बड़ी शुष्क और अरोचक भाषा है। अच्छा मास्टर। आओ एक प्याला शराब तो उड़ जाय फिर देखा जायगा।"

इस प्रकार मद्य पान कर वे बातों में लग जाते, पुस्तकें हटा दी जातीं और पाठ समाप्त होजाता था। इस पढ़ाई में दस मिनट से अधिक समय कभी नहीं लगता, जिसके लिये मास्टर साहब १५०० पाउण्ड (२२५०० रुपये) वेतन पाते थे।

बादशाह के एक तो मास्टरही साहब मित्र थे और दूसरे उनके गण एक लाईब्रेरियन साहब (पुस्तकालयाध्यक्ष), तीसरे मुसाहिब एक जर्मनी देश के चित्रकार और गायनाचार्य्य, चौथे सङ्गी उनके बाडीगार्डों (शरीर रक्षकों) के अधि-पति और पांचवां सखा उनका अङ्गरेज़ नापित था। इन्हीं पांचों में एक मैं भी था*। इनमें से राजनापित का सब से अधिक मान्य था, वह बादशाह सलामत का इतना मुंह लगा और सिर चढ़ा था कि मंत्री वा किसी नवाब का भी इतना प्रभुत्व न था। उसे लोग बादशाह का विशेष स्नेहपात्र जानते थे, इसलिये सब लोग उसकी दरबारदारी तथा सत्कार करते रहते थे। यदि इस व्यक्ति का जीवनचरित लिखा जाय, तो मनुष्य जीवन और उस की अवस्थान्तरों के परिवर्तन का एक नवीन उदाहरण और अद्भुत दृश्य प्रगट होगा। इसकी जीवनी के विषय में जहां तक मैं जान सका हूं, वह यह है—

यह व्यक्ति एक धूमयान (स्टीमर जहाज़) का ख़लासी

* जान पड़ता है कि पुस्तकाध्यक्ष (लाइब्रेरियन) आपही थे।

होकर कलकत्ते में आया था। लड़कपन से इसने नापित काही काम सीखा था, अतः कलकत्ते पहुंचते ही, इसने जहाज़ की नौकरी तो छोड़ दी और अपना पूर्वाभ्यस्त कर्म पुनः स्वीकार कर लिया। इस क्षौरकर्म (हज्जाम के काम) से इसने बहुत कुछ द्रव्य उपार्जन किया और अपने कार्य्य कौशल में विख्यात होगया। अन्त में योरोपियन (विलायती) व्यापारियों के साथ, उसने नाव पर माल लाद कर व्यापारार्थ लखनऊ यात्रा की ठान ली और नापित से व्यापारी बन बैठा। लखनऊ पहुंच कर यहां के रेज़िडेण्ट साहब से मिला। उस समय यह एक दूसरेही साहब थे, जो अब हैं वे न थे। उनकी चेष्टा थी कि वह अपने बाल घुंघराले बनवावें और पुनः रङ्गीले छबीले बन जावें, यह व्यापारी साहब तो नापित थे ही, भला फिर इन्हें क्षौरकर्म के करने में क्या आगा पीछा था। उसने उनके बाल ऐसे ढङ्ग से सुधारे कि रेज़िडेण्ट साहब की तो काया पलटसी होगई। बड़े साहब ने प्रसन्न होकर उसकी प्रशंसा बादशाह सलामत से की। यह साहब अब इंगलिस्तान में हैं और इनके नाम के साथ एम० पी० (मेम्बर आफ़ पारल्यामेण्ट) लिखा जाता है।

बादशाह सलामत के बाल भी सीधे सादे थे, घुंघराले तो क्या, उनमें लहर तक न पड़ती थी। उक्त नापित ने आश्चर्य्य जनक ऐंठन बादशाह के बालों में भी उत्पन्न करदी, जिसे देखते ही वे अत्यन्त प्रसन्न हुए और इसे राजनापित नियुक्त कर दिया। पुरस्कार और सम्मान की तो उसपर मानो वर्षाही होने लगी। अब इसके भाग्य का तो पूछनाही क्या था। तत्काल ही इसे "सर्फ़राज़खां" का पद प्रदान हुआ और संपूर्ण अवध

वासियों के सिर इसके आगे झुकने लगे। यही व्यक्ति जो किसी समय एक जहाज का ख़लासी था, आज एक बड़ा अधिकारी और माननीय पुरुष होगया। लक्ष्मीजी की तो अब इसपर ऐसी कृपा हुई कि चारों ओर से धन की वर्षा इसपर होने लगी। देसी रजवाड़ों के प्रियपात्र को धनी होते क्या देर लगती है? घूंस लेने के अतिरिक्त भी इसकी आमदनी के अनेकानेक मार्ग खुल गए। बादशाह की मेज़ पर जितनी शराब उठती थी, वह सब इसी के द्वारा खरीदी जाती थी। विलायती वस्तुयें भी जितनी आतीं, सब इसी के द्वारा मँगाई जातीं, सारांश यह कि जो कुछ क्रय विक्रय होता, सब इसी के हाथों होता था, इस प्रकार सहस्रों रुपयों का लाभ इसे हुआ करता था। वह कहावत ठीक है कि "जिसे पिया चाहे वही सुहागिन"। यह कहावत जैसी कि यहूदी जाति की रानी "इस्थर" के समय में उपयुक्त थी वैसी ही अब देसी राज्यों में भी ज्यों की त्यों घटती है।

नसीरुद्दीन हैदर, इस राजनापित पर, सब प्रकार से कृपा दृष्टि रखते, उसका सत्कार किया करते थे और पुरस्कारों की तो उन्होंने उसपर भरमार कर रक्खी थी। उसपर उनका पूर्ण विश्वास होगया था। धीरे २ वह शाही निमंत्रित व्यक्तियों में सम्मिलित हो जेवनारों में भी आने जाने लगा और अन्त को बादशाह के संग एकही मेज़ पर खाने का भी सौभाग्य उसे प्राप्त होगया। जब तक यह राजनापित अपने हाथ से शराब की बोतल न खोलता, तब तक बादशाह सलामत दूसरों के हाथ की खोली बोतलों की शराब कदापि पान न करते थे। बादशाह को अपने कुटुम्बियों से यह भय था कि कहीं वे भोजन में बिष देकर उनको

प्राण न लेलें, अतः प्रत्येक शराब की बोतल आते ही प्रथम राजनापित की मुद्रांकित होजाती थी, तब बादशाह के पानार्थ लाई जाती थी। बोतल खोलने के पूर्वही, वह अपनी मोहर को भली भांति देख भाल कर जांच लेता था, तब बोतल खोलता था और प्रथम उसमें से आप थोड़ासा मद्यपान कर तद्पश्चात् बादशाह सलामत को दिया करता।

उक्त राजनापित पर शाही विश्वास और अनुग्रह की चर्चा, समस्त भारतवर्ष और विशेषतः बङ्गाल प्रान्त में फैल गई थी। 'कलकत्ता रिव्यू' (Calcutta Review) नामक पत्र में इसका नाम "नीचदास" रक्खा गयाथा और इसके विषय में बड़े २ उपहास्य तथा भड़ैावा के लेख और अनेक व्यंग काव्य, परिहासोक्तियां लिखी जाने लगीं, परंतु इस नीच व्यक्ति को सिवाय अपने कमाने और धन लूटने के इन बातों पर कुछ भी लज्जा न आती थी। इधर लोग ठठोल और व्यंगोक्तियों की धूम मचा रहे थे, उधर वह अपने धन संचित करने के फेर में मस्त हो रहा था। इन पत्रों में से "आगरा अखबार" सब से अधिक दोषारोपण के लेख लिखता था (यह पत्र कुछ दिनों के पश्चात् बन्द होगया)। तदनन्तर लखनऊ से मेरे चले जाने के कुछ ही काल पूर्व इस राजनापित ने एक लेखक (क्लर्क) १००) रु० मासिक के वेतन पर रख लिया था, जो उक्त पत्रों के प्रत्युत्तर लिखा करता था। यद्यपि इस राज नापित के पास लन्दन के दरज़ियों की नाईं कोई उसका निज का कवि तो न था, तथापि 'टाइम्स' पत्र की नाईं उसका एक निज लेखक तो होगया था।

पाठक गण! आप लोग समझ सकते हैं कि जब मैं पहिले

होता था कि मानो हमलोग इन्द्रलोक में आगए हैं। रङ्ग-बरङ्गी मछलियों का तैरना, बजरे की सजावट, सरोवर के किनारों पर नाना प्रकार के फूलों का दृश्य, घनी झाड़ियों और लताओं की बहार और इनके बीच २ में से कहीं २ फूलों का खिलाव बड़ाही रमणीक और सोहावना मालूम देता था। यह स्थान मेरे ऐसा मन भागया था कि यदि मैं बादशाह होता, तो अन्य महलों को छोड़ कर यहीं आ रहता। बादशाह सलामत इस बारहदरी में अब कभी कदाच हीं आजाते थे। इसलिये इसके सुधार का ध्यान भी लोगों ने कम कर दिया था। बादशाह के खवास लोग कहते थे कि पहिले जब बादशाह यहां आते थे, तब बेगमातों का झुरमुट उनके साथ बजरे पर सवार होता था और खोजे लोग उस बजरे को खेते थे। वह समां भी इन्द्र के अखाड़े से कम न होगा। अब थोड़े दिनोंसे वे इधर आना भूल गए हैं, इसलिए यह इमारत बेमरम्मत सी हो रही है।

थोड़ेही दिनों पश्चात, एक बेर भोजन के समय इन रङ्गीन मछलियों के विषय में बातचीत छिड़ी, कहीं किसीने कहदिया कि यह मछलियां खाने में न मालूम कैसी हैं, यह खाई भी जाती हैं वा नहीं? इसपर बादशाह ने कहा कि हां वे खाई जाती हैं और उसीदम हुक्म भी देदिया कि कुछ रङ्गीन मछलियां पकाई जांय। दूसरे दिन ये मछलियां पका कर भोजन में आई गईं, हमलोगों ने उन्हें खाया, पर ये कुछ सुस्वादिष्ट न को, यदि होतीं भी, तो इनमें इतने कांटे थे कि उनका खाना कठिन था। इनसे तो हिलसा मछली, जो हिन्दुस्तान में कांटों कारण विख्यात है, सहस्र गुण अच्छी होती है।

मुझे दरबार के शिष्टाचार नित्यही कुछ न कुछ नए सीखने पड़ते थे और मैं उनसे उकता गया था। एक बेर बादशाह सलामत की ओर से रेजिडण्ट साहब और उनके एडीकांग (प्रधान संरक्षक) और अन्य २ फिरङ्गी अफसरों को भोज का निमंत्रण दिया गया था। भोजन के पश्चात बादशाह ने एक सरजन से कहा, जो सरकार कम्पनी की ओर का एक अफसर था और जिसे हम जोन साहब के नाम से लिखते हैं।

बादशाह०। जोन साहब, क्यों, आप मेरे साथ ड्राफ्ट की एक बाजी खेलेंगे?

(विदित रहे कि बादशाह जोन से जी में बुरा मानते थे, क्योंकि जब वह पहिले उनका संरक्षक था, तब वह बादशाह को हराने का उद्योग किया करता था)

जोन०। बड़े हर्ष पूर्वक मैं प्रस्तुत हूं, क्योंकि पृथ्वीनाथ के साथ खेलने में मैं अपना सैाभाग्य समझता हूं।

बादशाह। अच्छा सौ मोहर की बाजी रही।

जोन। जहांपनाह! मैं गरीब आदमी भला १०० मोहर बदने को कहां से लाऊं।

बादशाह। (मास्टर की ओर घूम कर) मास्टरजी, भला आप मुझसे १०० मोहर की बाजी लगावेंगे?

मास्टर। जैसी श्रीमान की आज्ञा, मैं हजूर के साथ खेलने में अपना अहोभाग्य समझता हूं।

मास्टरजी बादशाह के मन की विलक्षण लहर बहर [illegible] जानते थे। इतने में खेल आया और गोटियां बिछीं। मैं खेल पासही बैठा हुआ प्रत्येक चालों को ध्यान पूर्वक देख रहा था।

मैंने मास्टरजी के साथ कई बेर शतरंज खेली है, इसलिये मुझे विश्वास है कि वह ड्राफ्ट भी अच्छी प्रकार खेल सकते होंगे, परन्तु मैं क्या देखता हूं कि बादशाह की चालें ऐसी उत्तम न थीं, तैा भी मास्टरजी जान कर चालें खराब चलते थे। इससे भी मैंने दरबार का एक शिष्टाचार सीखा, क्योंकि दरबार के रीति के अनुसार बादशाह सलामत को जहां तक हो सके हराना उचित नहीं है। मास्टर की चालें यद्यपि अच्छी न थीं, तिसपर भी बादशाह सलामत को जीतना कठिन होता था। पर मास्टर यही प्रगट करते जाते थे कि वह बड़े ध्यान और उद्योग से खेल रहे हैं। मैंने यह भी सुना है कि प्रायः शाही अनुचर लोग बादशाह के साथ खेलनेवाले को बातों में ऐसा लगाये रहते थे कि बादशाह आंख बचा कर मोहरे तक बदल लेते थे।

उक्त खेल समाप्त हुआ और मास्टरजी हार गए ंछेछोरे-

बादशाह। (हर्ष पूर्वक) मास्टरजी, अब १० यदि पाठक-

के जित्ने मेरी हुईं। ...जहां में प्रचलित होगा,

मास्टर। निस्तानियों में, अथवा अवध को छोड़ कर अन्य

सेवा में उपस्थिइस कुरीति का प्रचार न होगा, तो उनका यह

बादमूलक है। जैसे कि रूस के ज़ार (बादशाह) को

देखो ड्राफ्ट वा अरटा में हराने का साहस उनके किसी अनु-

...ा नहीं है। ज़ार कोई मूर्ख वा बच्चे नहीं हैं, तथापि किसी

हस्लिए प्रकार उन्हें जिताना ही पड़ता है। यह एक अनुमा-

को सिअब तो हुजूर की ...ती है, अब एक ऐसा उदाहरण दिया

चुकी। बादशाह। "रे...स्पष्ट रूप से दिखाया जाता है कि ऐसी

चलत ...स्तान के बाद...न्य देशों में भी है। इसे पढ़ कर आपही

लोग निश्चय करें कि यह रीति हमारे बादशाह सलामत नसीरू-द्दीन हैदर के दर्बार से किस बात में कम है।

प्रत्येक वर्ष में, नवम्बर की ३ तारीख को, सेण्ट ह्यूबर्ट का मेला ग्रूनीवाल्ड में होता है, जिसमें सूअर का शिकार खेला जाता है। इस दिन बरलिन के महाराजा बड़े उत्तम वस्त्र धारण करके (अर्थात काले मखमल का कोट और सफेद साटन का पतलून पहिन कर) वहां आते हैं। उनके साथ बहुत से शिकारी चर्मी और लाल रङ्ग के कोट पहिने रहते हैं। वहां मैदान में एक सूअर छोड़ा जाता है, जिसके दांत पहिलेही से रेत दिये जाते हैं कि जिसमें वह कोई नुकसान न पहुंचा सके। इसके पीछे घोड़ों पर बरलिन के बादशाह, उनके साथी और शिकारी कुत्तों के झुंड दौड़ते हैं और घोड़े छालकट दौड़ाते हुए बिचारे सूअर को घेर लेते हैं। कुत्ते उसे दबोचते और काट २ खाते हैं, जब वह सूअर बिचारा अस्त व्यस्त होजाता है, तब कुछ लोग घोड़ों पर से उतर कर सूअर को पकड़ लेते हैं और कुत्तों को हटा देते हैं। तब बादशाह साहब घोड़े से उतर कर उसके पास आते हैं। उनके हाथ में एक छुरा दिया जाता है, जिसे वह सूअर के गले पर रेत देते हैं। तदुपरान्त लोग बादशाह की शुरता की बड़ी प्रशंसा करने लगते हैं और चारों ओर से वाह वाह की घोषणा होने लग जाती है, जिसपर हजरत बादशाह साहब मारे खुशी के फूले नहीं समाते और प्रसन्न वदन धीरे [illegible] को नचाते, कुदाते राजभवन को सिधारते हैं। [illegible]हर बहर [illegible]

इस वृत्तान्त से आपको मालूम हो[illegible]गोटियां बिछीं। मैं खेल के दर्बार की जो अवस्था है, वह युरोप के [illegible] पूर्वक देख रहा खाने

बुरी नहीं हैं।

हम योरोपवासी अनुचरों पर जो बादशाह सलामत की कृपा दृष्टि और उनका साहाज्य था, उससे अवध के उमरा और रईस बुरा मानते थे। संसार में ऐसा होना अस्वाभाविक नहीं है, क्योंकि किसी नवाब अथवा मंत्री वा पुलिस के अफसर की, किंवा जनरैल राजा बख़्तावरसिंह (जिनका वर्णन आगे आवेगा) की भी राजनापित के आगे कोई दाल नहीं गलती थी। एक बेर नवाब-वजीर ने बादशाह सलामत से निवेदन किया, 'कि इन विदेशी अनुचरों को उचित नहीं है कि जहांपनाह के आगे जूता पहिने हुए आया करें, हमलोग ऐसा नहीं करते। हुजूर ने अपने अतीव अनुग्रहता और सौजन्यता से इसकी आज्ञा दे रक्खी है, मैं निश्चय पूर्वक कह सकता हूं कि हजूर के पिता श्रीमान गाजीउद्दीन हैदर कदापि ऐसा न होने देते"।

नवाब-वजीर की नम्र और युक्तियुक्त बात को सुनकर बादशाह थोड़ी देर सटपटा गए और चुप्प होकर सुनते रहे। रौशनुद्दौला ने यह बात ऐसे रीति से कही थी कि बादशाह को जवाब देनाही पड़ा।

बादशाह। "भला नवाब यह तो बताओ, क्या मैं इङ्ग-लिस्तान के बादशाह से भी बड़ा हूं?"

...और। हिन्दुस्तान के बादशाहों में तो श्रीमान से कोई भी ईसलेए नहीं है। परमेश्वर पृथ्वीनाथ को सहस्र वर्ष की आयुर्वे-को सिश्रब तो हुजूर का मान्य दिल्ली के बादशाह से बढ़ा चढ़ा है।"

चुकी। बादशाह। "रौशनुद्दौला, मैं यह पूछता हूं कि क्या चलट 'स्तान के बादशाह से भी मेरा सम्मान बड़ा है?"

वजीर । "यह दास तो श्रीमान से बढ़कर किसीको नहीं कह सकता ।"

बादशाह । "नवाब, सुनो और जनरैल तुम भी सुनो । इङ्गलिस्तान का बादशाह हमारा स्वामी है और जब ये लोग उनके सामने जूता पहिने जाया करते हैं, तो मेरे सामने जूता पहिने रहने में इनका क्या दोष है । अच्छा नवाब, इस बात का जवाब दो कि क्या येलोग कभी टोपी पहिने भी मेरे सामने आते हैं ?"

वजीर । नहीं ।

बादशाह । बस, उनके यहां के शिष्टाचार की यही रीति है । जैसे तुमलोग जूता उतार देते हो, वैसेही येलोग टोपी उतार डालते हैं, अच्छा आगे से यह शर्त रही कि मैं इन्हें जूता उतार कर आने की आज्ञा देदेता हूं, पर तुम लोग को भी आगे से पगड़ी उतार कर दरबार में आना पड़ेगा ।

यह सुनकर नवाब चुप ही होगया और फिर कभी इस विषय को न छेड़ा, क्योंकि मुसलमानो मे पगड़ी उतारना बड़ा अपमान और अशगुन समझा जाता है । ये लोग वैसी अवस्था में, जब कि ये लोग किसी बात के करने का प्रण करते हैं, तो ऐसी शपथ खाते हैं, "यदि हम ऐसा न करें तो हमारे बाप की पगड़ी उतर जाय" ।

उक्त बात चीत सुनकर हमलोग चकित होगए और बाद- शाह ने अपने लेखक को आज्ञा दी कि इस बात की याद्दाश्त वह लिखले, क्योंकि इस प्रकार की दरबारी बातें लिख ली जाती थीं, जिससे लोगों को मालूम होजाय कि बादशाह मूढ़ा खाने

हैं। हां, जब वह नशे में चूर होजाते थे, तब कभी २ कुछ छिछोरापन कर बैठते थे।

मैंने बादशाह का चित्र कई भावों से भली भांति खींच कर दिखा दिया और अभी यथाक्रम आगे चलकर उनकी भली बुरी बातों का और भी वर्णन करूंगा। इस अध्याय को समाप्त करने के पहले, मैं बादशाह के दो खेलों का दृश्य दिखाता हूं-अर्थात् मेढक-कुदान और पुष्पक्रीड़ा।

एक बेर हमलोग चान्दगंज के बाग में थे, जिसके चारो ओर कनाती दीवार खिंची हुई थी और इसके बाहर जानवरों की लड़ाई प्रायः कराई जाती थी। यह बाग तीन वा चार एकड़ जमीन के घेरे का था। बादशाह सलामत के साथ जब हमलोग रहते, तब कोई हिन्दुस्तानी आदमी अन्दर नहीं जाने पाता था। हम में से किसी ने कभी बादशाह सलामत से मेढक-कुदान का वर्णन किया हो, अथवा उन्होंने कहीं उसका चित्र देखा हो, इसलिए इस खेल देखने की उन्हें बड़ी लालसा थी। हिन्दुस्तानी अनुचर इत्यादि बाग के बाहर ही थे, बाग का फाटक बन्द कर दिया गया और बादशाह ने हमलोग को मेढक-कुदान खेलने की आज्ञा दी। बाडीगार्ड के कप्तान ने मास्टर जी को 'पीठ' दी और लाइब्रेरियन ने चित्रकार को। पहिले तो हमलोग स्कूल के लड़कों की तरह नीची पीठ पर से ढेलों मारने लगे, क्योंकि हममें से कोई भी इस खेल का अच्छा खेलाड़ी न था, परन्तु धीरे २ पीठ ऊंची करते गए। मास्टर, चुकी ?, कपतान, लाइब्रेरियन, चित्रकार पारी २ से स्कूलब्रोयेज़ चलते रहे लगे कूद फांद करने। निस्सन्देह यह बड़ी फुरती और

मेहनत का खेल है ।

बादशाह थोड़ी देर तो खड़े देखा किए, फिर उनसे न रहा गया और आप भी साहस कर बैठे । बादशाह दुबले पतले थे, और बलिष्ट न थे । उस समय मैंही उनके निकट था, वह मेरी ओर पुकारते हुए दौड़े, मैंने अपनी चट 'पीठ' दी और वह छलांग मार कर पार होगए, क्योंकि वह हलके, फुरतीले और उत्तम घोड़सवार तो थे ही, चट उछल कर कूद गए । अब मेरी पारी आई । मैंने बहुत कुछ क्षमा प्रार्थना मांगी, पर उन्होंने एक न सुनी । अधिक जिद्द करने वा आज्ञापालन न करने से वह रुष्ट होजाते, अतएव मैं दौड़ कर आया, उन्होंने पीठ झुकाई । मैंने जो छलांग मारी, तो मैं उलझ कर गिरा । मेरे साथ साथ बादशाह सलामत भी लुण्ड मुण्ड होकर लुढ़कते हुए कियारी में जापड़े ।

बादशाह सलामत मुंह बनाए झाड़ पोछ कर उठे और बोले 'बाप रे बाप, तुम तो हाथी से भी भारी हो'। मैं तो डर गया कि कहीं वे रुष्ट न होगए हों, पर कुशल हुई कि वे रूष्ट नहीं हुए । राजनापित ने झटपट अपनी पीठ झुकादी और बादशाह फुरती से कूद गए, हम में से जो सब से हलका था उसको बादशाह ने फिर पीठदी और वह फलांग मार कर पार होगया । इतनेही से बादशाह सलामत प्रसन्न होगए । इसी प्रकार हम लोग कूद फांद करते रहे । अन्त को बादशाह सलामत जब थक गए, तब यह खेल बन्द हुआ । उन्होंने बरफ का ठंडा जल पिया और सुस्ताये । यह खेल कई बेर खेला गया था ।

अब पुष्प क्रीड़ा का वृत्तान्त सुनिए । उन जाड़े के दिनों में, बाने

हिन्दुस्तान में साहबों का बड़ा दिन कहते हैं। हमलोग चांद-गंज के बाग में थे, जहां पर कि उक्त मेढक-कुदान का खेल खेला गया था। इङ्गलिस्तान में अधिक बर्फ गिरने की कहीं बात छिड़गई और बातों बातों में हिम-क्रीड़ा (Snow-balling) का भी वर्णन आया। जिस किसी ने हिम पड़ते नहीं देखा है; उसको बर्फ के गिरने और उसके गेंद बना कर एक दूसरे पर फेंकने के खेल का समझाना कठिन है।

अस्तु बाग में इस समय गेंदे के पुष्प लगे थे। बादशाह ने हिम-क्रीड़ा का वृत्तांत सुनकर दो चार गेंदे के फूल तोड़े और लाइब्रेरियन पर फेंके, जो हमलोग से कुछ दूर पर खड़ा था। फिर क्या था, अब जिसे देखो फूल तोड़ २ कर एक दूसरे को मारने लगा—आगे पीछे, दाएं बाएं फूलों की बौछार होने लगी। यही गेंद के फूल मानो हमारे लिए हिम के गेंद थे। बादशाह सलामत पर यदि कोई एक फूल फेंकता, तो वे उसपर तीन चार फूल फेंकते। इस खेल से वे बड़े मग्न हो रहे थे (इसी का नाम पुष्प-क्रीड़ा है)। खेल बन्द होने तक हमलोग के कपड़े पीले होगए थे और उसपर गेंदे की पत्तियां इतनी चिपक गई थीं मानो हम सब बड़े गेंदे के फूल बन गए थे। पेड़ों में फूल एक भी न रहे। हमारे चले जाने पर माली लोग क्या कहेंगे वा सोचेंगे, इसका किसी ने भी ध्यान न किया। फूल रहे वा न रहें, इसकी किसको परवाह थी, यहां तो बादशाह को खुश करना था। खेल को वह बहुत पसन्द करते थे और कई बेर यह खेल चुका गया था॥

चलत
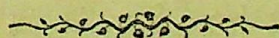
तीसरा बयान।

शिकार का वर्णन।

एक दिन भोजन के समय शिकार की बातचीत छेड़ कर किसीने कहा कि लखनऊ से कुछ मील पर एक झील में शिकार बहुत हैं, इस समय बादशाह सलामत प्रसन्नचित्त थे, कहने लगे "हां, हां, हमने भी उस झील के विषय में सुना है, अच्छा चलें वहां चलकर शिकार खेलें, देखें हमारे दरबार में शिकारी कौन कौन हैं"।

उसी दम हुक्म जारी होगए और यह निश्चय होगया कि कल हमलोग उस राजबाड़ी में चलें, जो उक्त झील के पास है। इस राजबाड़ी का नाम "दिलकुशा" है और यह लखनऊ से थोड़ेही दूर पर बनी हुई है। हमलोगों को आशा थी कि वहां से हमलोग सांझ तक लौट आवेंगे, इस कारण से हम सबों ने रात के लिये बिस्तर इत्यादि का कोई प्रबन्ध नहीं किया। हमलोगों से पहुंचने के पहिलेही, बादशाह सलामत अपने लाव-लश्कर समेत दिलकुशा में पधार चुके थे। हमलोग बैठे सोचतेही रहे कि अब बुलाहट होगी, पर हमें किसीने भी न पूछा। शिकार का समय बीता जाता था। दिन ढलने लगा और ढलते २ सांझ होगई। हमलोग अरटा खेल २ कर अपना जी बहला रहे थे।

रात के नौ बजे भोजन के समय हमलोग की बुलाहट हुई, देखा कि बादशाह सलामत भोजन के लिये बैठे हैं। किसी को भी साहस न पड़ा कि पूछें जो आज शिकार क्यों नहीं खेला गया। बादशाह ने भी इस विषय में कुछ न कहा, वही खाने

पीने, नाच रङ्ग और हँसी ठट्ठे में रात बीतती गई। आधी रात के लगभग, बादशाह सलामत खूब शराब पीकर मत्त हुए और हमलोग आशा में थे कि अब लोग इन्हें अन्तःपुर लेजाना चाहते हैं कि इतने में वे बड़े जोर से खिलखिला कर हँसे। हमलोग चकित से होगए कि क्या बात हुई,क्योंकि प्रत्यक्ष में तो हँसी का कोई कारण न था, और हमलोगों के चुप रह जाने पर वे स्वयं बोल उठे।

बादशाह। (हँसी रोक कर) "भाई यह ठीक नहीं है कि तुम लोग हमें यहां अकेला छोड़ कर चलदो। यह बड़ा बीहड़ स्थान है (राजनापित और एक साहब से) तुमलोगों की बीबीयां हैं, तुम लोग अपने २ घर चले जाओ। तुम्हें रात भर अपनी स्त्रियों से विलग रखना मैं नहीं चाहता। बाकी सब लोग यहीं रहें।"

लखनऊ से बाहर बादशाह सलामत के साथ जब हमलोग जाते, तो बिस्तरे,नौकर, चाकर, कपड़े लत्ते भी साथ रहते थे, क्योंकि प्रति दिन हमें अपने कपड़े बदलने पड़ते थे, इस कारण से एकही गठरी वा बेग लेकर बादशाह के साथ लखनऊ से दूर कोई नहीं जाता था। बादशाह की ऐसीही आज्ञा थी! हमें आज्ञा पालन करनी आवश्यक थी।

जाती समय बादशाह ने यह भी कहा, "अच्छा, अब कल हमलोग चल कर शिकार खेलेंगे," इतना कहकर वह तो हरम को सिधारे। उनके उठ जातेही वे लोग (जिन्हें आज्ञा मिल चुकी थी) अपने २ घर को चल दिए, इन्हींमें से एक साहब चलती समय मुझसे कहते गए कि वह जाकर मेरी पालकीभेज-

वादेंगे, जिसमें मैं सुखपूर्वक सो सकूं (सफर में पचासों बेर मुझे इसी पर सोकर रात बितानी पड़ी थी) और मेरे नैाकर और कपड़े भी भेजवादेंगे कि जिसमें दूसरे दिन मैं कपड़े बदल सकूं।

बादशाह सलामत जब हँसते हुए अन्तःपुर सिधारे, तब हमलोग भी हँसी में उनका साथ देते रहे, क्योंकि यही हमारा कर्तव्य था। अन्तःपुर में जाती समय बादशाह ने कह दिया था कि जबतक हमलोग चाहें, नाच गाना कराते रहें, और वे रण्डियों से भी कहते गए कि तुम लोग गा कर साहबों का जी बहलाती रहो।

यह भी एक अनुपम समय था! हमारे मित्र तो घर चलेगए और जगमगाते कमरे में, जहां नाना प्रकार की कन्दीलें, झाड़ फानूस और हांडियों में मोमबत्तियां जल रही थीं, सन्नाटा सा होगया। बादशाह सलामत के साथ उनके मोरछल करनेवाली सहेलियां भी चलदीं, परन्तु गाना अबतक होही रहा था। जब हमें मालूम हुआ कि बादशाह अंतःपुर में पहुंच गए, जहां हमारी नहीं जा सकती थी, तब हमलोगों ने नाच बन्द करा दिया। शराब के नशे में चूर तो थेही, थककर हमलोगों ने लेटने पोटने की ठहराई। हमलोगों को किसी बात का कष्ट तो थाही नहीं—शाही मेज भांति भांति के फल और मेवों से लदे थे, परन्तु फिर भी यकायक कमरे में चहचहे और कहकहे के बन्द होजाने से उदासी छागई थी। अब हमलोग बात भी करतें तो धीरे धीरे। अब रहा मदिरापान, उसका यह हाल था कि एक दिन हमलोगों ने कहीं अधिक पी लिया था, दूसरे दिन जो कुछ शिरःपीड़ा इत्यादि से हमलोगों ने दुःख भोगा, उसे हम

लोग अब तक भूले न थे, भला फिर कैसे अधिक पी लेने का साहस करते!

अन्तगत्वा हमलोग टेबुल से उठकर कोठी के चारों ओर घूमने लगे। यह कोठी हमलोगों के टहलने के लिये खुली हुई थी। हां, बादशाह के सोने की कोठी में हम नहीं जा सकते थे, जिसके आगे हिन्दुस्तानी लौंडियां, सिपाहियों के सदृश वरदी पहिने और बन्दूक कन्धों पर रक्खे हुए, धीरे २ घूमतीं और पहरा दे रही थीं। उस समय सब ओर सन्नाटा छा रहा था, ज़रा भी खड़का नहीं होता था। इधर उधर हिन्दुस्तानी नौकर चाकर अपनी २ चादरों में लपटे, गोलालाठी बने ऐसे बेसुध पड़े सो रहे थे कि हमारी आहट से भी उनकी नींद नहीं उचटी।

रात के दो बज गए थे और अबतक हमारे नौकरों का कहीं पता न था। विवश हो कुरसी और कोचों पर हम जा लेटे और अपने को मच्छरों और फतिङ्गों की कृपा पर छोड़ दिया और सोगए। इस समय मेज पर एक बड़ी मोमबत्ती बल रही थी और सिवाए घुर्राटों और पहरे वालों की चाप के और कोई शब्द नहीं सुनाई देता था। खाने के कमरे में फर्राश लोग कन्दीलें बुझा रहे थे। मुझे नींद आही चली थी कि इतने मे मेरी पालकी आ पहुंची और कमरे के बगल में रखदीगई। मेरे साथियों के लिए भी यही व्यवस्था हुई। हमारे नौकरों ने हमारे सोने का प्रबन्ध करदिया और हमलोग चहल पहल को भूल कर मीठी नींद की लहरें लेने लगे।

दूसरा दिन भी इसी प्रकार व्यतीत हुआ। बादशाह के

एक नक़ीब ने हमलोगों से कहा कि जहांपनाह आप लोगों को कई बेर याद करचुके हैं। इसका तात्पर्य्य केवल इतनाही था कि कहीं हमलोग उकता कर चल न दें। बारह बजे राजनापित बाल सँवारने को बुलाया गया। हमलोग कोठी में बैठे अपना जी बहला रहे थे, कभी मुंह में सिगार दबाए टहलने लगते, कभी अंटा खेलने लगते और कभी हिन्दुस्तानी कारीगरी के उन नमूनों को देखते जो कोठी में सजे हुए थे। यह तो स्पष्टही था कि बादशाह यही चाहते थे कि हमलोग वहीं रहें। शिकार के विषय में अभी तक कोई आज्ञा नहीं हुई थी और न वहां (झील पर) चलने की कोई तय्यारी ही देखने में आती थी, जहां हजारों पक्षियों के झुण्ड कलोल कर रहे थे।

आज भी रात को भोजन से निपट कर जब हमलोग उठे, तब बादशाह ने यही कहा कि ऐसे निर्जन स्थान पर उनको छोड़ कर हमलोगों का चले जाना उचित नहीं है, कल शिकार खेलने चलेगें। इस रात को भी हमलोग अपनी २ पालकियों ही में सोए और नौकरों को दूसरे दिन के लिए कपड़े लाने को शहर भेज दिया। यह सोच कर कि कहीं बादशाह सलामत अभी कुछ दिन यहां और डेरा जमावें, हमलोगों ने अपने नौकरों को सफर का सब सामान, ओढ़ना, बिछौना, कपड़े, सन्दूक इत्यादि लाने को कहदिया, जिसमें फिर हमलोगों को किसीबात का कष्ट न उठाना पड़े। दूसरे दिन ख़वासों से जो पूछ गीछ की तो मालूम हुआ कि बादशाह सलामत अपनी एक नई बेगम साहिबा के साथ बिलास में मग्न हो रहे हैं। यह बेगम अभी तरुण और अत्यंत सुन्दरी थीं और जिन्हे दिलकुशा आने से दो तीन दिन

पहिले हमलोगों ने देखा था। 'यह मानो नया फूल खिला था, जो बहुत जल्द कुम्हला जाने वाला था, यह वैसाही नया खिलौना था, जिसे बच्चे पहले बड़े चाव से खेलते हैं और फिर उसे फेंक कर दूसरे खिलौने से जी बहलाते हैं।'

एक सप्ताह का सामान मैंने जुटा लिया था। एक सप्ताह योंही व्यतीत होगया और अब हमलोग झील की ओर चले। बादशाह ने विशेष रूप से आज्ञा देदी थी कि हमलोग साथही झील पर चलें, कोई वहां पहले न जाय। झील को और उसके चारों ओर शिकार के सामान को देख कर हमलोग चकित और प्रसन्न हुए। जिधर से हमलोग झील पर गए थे, उधर से भूमि कुछ ढालुवीं और नीची थी, अर्थात् जब तक हमलोग झील के किनारे के टीलों पर नहीं चढ़े, हमें झील का पानी दिखाई नहीं दिया।

अब हमारे सामने झील में पानी लहरा रहा था और डूबते हुए सूर्य की किरणों से स्वर्णमय होरहा था, यह झील दो मील लम्बी और १ मील चौड़ी होगी और इसके चारों ओर घना जङ्गल था। जिधर से हमलोग गए थे उधर का किनारा कुछ अधिक ऊंचा था और झील का एक बाहु इधर को निकल आया था। इसी टीले पर दूर तक रावटियां और खेमे गड़े थे, जिनके बीच में बादशाह सलामत के खेमे थे और इनके चारों ओर कनातें घिरी हुई थीं। बादशाह का जो खेमा था, वह सुनहली तार और बादले का था, जिनमें ल.ल धारियां अनुपम छटा दिखा रही थीं, और उनपर रंग विरंगे झण्डे फहरा रहे थे। कनात के पीछे बादशाह की बेगमात, उनकी लौंड़ियां, पहरेदा-

रिनों, गायिकाओं और मिरासिनों की छोलदारियां थीं। इस शिकार में रेजीडण्ट साहब भी आने वाले थे, इसलिए बादशाही खेमे के दाहिनी ओर उनके लिए भी एक खेमा गड़ा था, और दूसरी ओर हमलोगों के लिए एक चौखूटा खेमा था, इन खेमों के सेवाय नवाब, वजीर, दीवान, करनैल, और जरनैल के खेमों के अन्य २ कर्मचारियों के भी तम्बू थे। इनके साथ फिर नौकरों चाकरों के डेरे भी अलग लगे हुए थे। इसी छोटे से खेमों के नगर में हाथी, घोड़े और ऊंठ इत्यादि, झुंड के झुण्ड बंधे थे, कहीं हौदों, कहीं पालकियों, कहीं तामजामों, कहीं बहलियों और डोलियों की भरमार थी।

बादशाह की इच्छा यह थी कि हमलोग, उनका वैभव और ऐश्वर्य्य देखकर चमत्कृत होजायं, वास्तव में ऐसाही हुआ। सचमुच, ऐसा अपूर्व आडम्बर देखकर हमलोगों की आखें चौंधिया गईं। हमलोगों के विस्मित होने पर बादशाह फूले नहीं समाते थे। सच तो यह है कि इससे बढ़कर ऐश्वर्य देखना तो दूर रहा उनका अनुमान भी हमलोग नहीं कर सकते थे।

हमलोगों में से किसी को इतना साहस न था, जो बादशाह सलामत से पूछता कि जब यह झील लखनऊ से इतनी निकट है कि यदि हमलोग दिन उगते यहां आते और शिकार खेल कर सांझ तक आराम से लौट जासकते थे, तो इतने आडम्बर करने की क्या आवश्यकता थी? दिन भर यहां शिकार खेल कर सन्ध्या समय हमलोग घर लौट जा सकते थे और घर जाकर आनन्द से खाते पीते और सो रहते। हमारा धर्म भी यह पूछने का नहीं था। हमलोग उस रमणीक स्थान की शोभा और वहां

के भड़कीले साज़ोसामान को देख २ कर चमत्कृत होही जाते थे, जिसे देखकर बादशाह प्रसन्न हो रहे थे और हमलोग भी आनन्द लूट रहे थे।

हमलोगों को मालूम हुआ कि बादशाह के साथ और साधारण मनुष्यों के साथ शिकार खेलने में बड़ा भेद है, क्योंकि अकेले बादशाह सलामत ही सात दिन तक शिकार खेलते रहे और किसी को बन्दूक चलाने की आज्ञा न थी। झील के एक किनारे पर एक क़नात खड़ी थी, जिसमें पक्षी बादशाह को न देख सकें। पहले तो भुने दाने डाल कर वे सधाए जाते और जब वे लोग दाना चुगने को इकट्ठे हो जाते, उस समय सारे लश्कर में सन्नाटा छा जाता और बादशाह को इसकी सूचना दी जाती। तब बादशाह सलामत धीरे२ क़नात के पास आते और एक आदमी उनकी बन्दूक लिए साथ रहता। इस क़नात में बहुत से छेद बने हुए थे, जिनमें से बन्दूक की नाल को बाहर निकाल कर पक्षियों पर निशाना लगाया जाता। इधर बिचारी चिड़ियां तैर कर दाने चुगतीं, कोई आपुस में लड़तीं, कोई किलकिलातीं, कोई किलोलें करतीं और आनन्द मनाती थीं। उन्हें यह खबर न थी कि परदे की ओट में बादशाह सलामत बन्दूक लिए उनकी ताक में खड़े हैं। इतने में बादशाह सलामत ने बन्दूक दागी, 'दन्न' से शब्द हुआ और छर्रों की बौछार चिड़ियों पर पड़ी, उनकी झुण्ड चांव चांव करती उड़ी और कुछ देर इधर उधर मंडला कर जङ्गल की ओर उड़ गई। यद्यपि बादशाह सलामत बड़े उत्तम लक्षबेधी न थे, तथापि वे अपने को उत्तम शिकारी समझते थे। बनरखे लोग जल में कूदकर चोटीले पक्षियों का ढेर

पर ढेर बादशा के आगे लगादेते। किन्तु जितने पक्षी वस्तुतः घायल होते, उनसे दुगुने पक्षियें का ढेर होजाता। पाठकों के आश्चर्य्य होता होगा कि वेलाेग घायल पक्षियें का दुगुना ढेर कैसे कर देते थे? परन्तु मैं आपको विश्वास दिलाता हूं कि सचमुच पक्षियें का द्विगुण ढेर लग जाता था। बात यह थी कि वेलोग पहिलेही से पक्षियें को इधर उधर से घायल करके झीलों में ला रखते थे और छिपाकर उनको भी जल में से या न लगता, तौभी चोटीले सलामत का निशाना ठीक लगता निकाल लाते थे। बादशाह जानवरें का ढेर उनके सामने लगा दिया जाता था, क्योंकि बादशाह को प्रसन्न रखनाही सभें का इष्ट था। कौन माई का लाल था जो यह मुंह से निकाल सकता कि ये पक्षी बादशाह के मारे नहीं हैं। सच तो यें है कि मैं कभी ऐसा न कहता कि ये जहांपनाह के मारे नहीं हैं, क्योंकि मुझे जो हजार रुपये महीने मिलते थे, वह किस दिन के लिये मिलते थे, इसी लिये कि मैं बादशाह सलामत को प्रसन्न रक्खूं, फिर मैं इसके विपरीत क्यों करने लगा था।

तीन चार दिन इसी प्रकार आखेट होता रहा। इसके अनन्तर रेजिडण्ट अपने स्टाफ (गणों) के साथ वहां आये, तब बादशाह सलामत ने सब को शिकार खेलने की आज्ञा देदी और रेजिडण्ट और उनके साथियें ने और हम सभें ने शिकार खेला। हमलोगें के लिये डोंगियां लाकर झील में छोड़ी गईं। जिनपर चढ़ चारों ओर घूम कर के और जी भर के हमलोगें ने शिकार खेला। इसके बाद सधाये हुए शिकारी बाज लाये गए। इनका शिकार मैंने पहिलेही पहिल देखा। इनके शिकार की

रीति साधारण बाजों के शिकार से भिन्न प्रकार की थी और उनमें भी सिखाये हुए बाजों की चतुरता और शिकार खेलने का ढङ्ग बहुतही उत्तम और देखने योग्य था । शिकार के लिये ये बाज विशेष रीति से सिखाये जाते थे । पहिले तो दाने की लालच पर हजारों जानवर झील के किनारे इकट्ठे कराए जाते, तब चार पांच बाज छोड़े जाते, फिर हमलोग बन्दूक लेकर, कुछ मैदानों में, कुछ नावों पर, कुछ झाड़ियों में खड़े होजाते, तदुपरान्त पक्षियें उड़ा दीजातीं । बाज ऊपर आकाश में उन्हें घेरलेते और इनके चारों ओर, ऊपर नीचे, चक्कर काटने लगते, ये बिचारे जानवर घबड़ाये हुए न तो आगे जा सकते और न पीछे, उस समय हमलोग हजारों जानवरों का शिकार बन्दूकों से कर लेते ।

यह दृश्य भी कैसा मनोरम होता है । पाठक गण ! आप आंख बन्द करके इस दृश्य का ध्यान करें कि हजारों जानवर सहमे और डरे हुए बीच आकाश में उड़ते हुए भागने का यत्न करते हैं, पर उन्हें बाज घेरे हुए किसी ओर भी नहीं जाने देते। ये घिरे हुए पक्षी न ऊपर जा सकते और न नीचे उतर सकते हैं, एकही घेरे में कावे काटते हैं, बौखलाये हुए एक दूसरे से टकरा भी जाते और इधर से उधर फड़फड़ाते हैं, इसपर भी शिकारियों की भीड़ नीचे बन्दूकें छतियाए खड़ी हैं और नावें झील में घूम रही हैं । चिड़ियों के भागने का कोई रास्ताही नहीं है।

इस समय की दौड़ धूप, चहलपहल अकथनीय है । हमारे पड़ाव में नित्यही नये ढङ्ग के शिकार खेले जाते थे, तो भी बादशाह सलामत का चित्त कभी २ उदास रहता था, क्योंकि

वे उत्तम लक्षबेधी न थे, इसलिये उन्हें इस शिकार में अधिक आनन्द नहीं आता था। उनकी असन्तुष्टता से हमलोगों का, जो सदा उनके साथ रहते थे, नाकों में दम था। यह देखकर हमलोगों ने बादशाह को बड़े शिकार खेलने को उभाड़ा। मुझे तो इस रमणीक स्थान के छोड़ने का बड़ा दुःख हुआ। इस झील के चारों किनारों पर हरे २ घने पेड़ और लतायें शोभायमान थीं। इस झील में नावों पर बैठकर शिकार खेलना, कभी खेते हुए हरित बन की शोभा निरखना, कभी बादशाही डेरों का आडम्बर और वैभव का दूर से लखाई देना और उनके बीच में घोड़ों, हाथियों, के झुंड का दिखाई देजाना और कभी फिर पेड़ों की आड़ में होजाने से उनका छिप जाना, मन को हरे लेता था। नाव पर बैठे २ कभी किसी सारस वा हँस का सामने आ जाना और हमें देखते ही भड़क कर उड़ जाना, वा उड़तेही उड़ते किसी शिकारी के लक्ष से बिध कर उसका जल में गिरना, फिर उसका डुबकी मार मार कर भागना और हमारा पीछा करना, दिल बहलाने के लिये क्या कम था। कभी छोटे पक्षियों का भड़क कर और चावं चावं करके टीडीदल के समान उड़ कर कावे काटते हुए जङ्गल में चले जाना, कभी सूर्य्य की किरणों से स्वर्णमय सीतलपाटी के समान झील के निर्मल जल का दृश्य, बड़ाही मनोरंजक होता था। फिर संध्या समय मुसल्मानों का, झील के किनारों पर नमाज़ पढ़ते हुए, देखाई देना, कभी उनका सिजदा करते हुए सिर टेकना, कभी खड़े होजाना, (ये लोग प्रायः शाही तिलंगे लाल वरदी पहिने हुए रहते थे) और उनके प्रतिबिम्बों का जल में प्रतिबिम्बित होना, कुछ कम

मनोहारी न था। कभी २ जङ्गलों से, मोरों की किलकार, बन्दरों और लगूंरों की चीत्कार, पपिहों के पी पी की पुकार सुनाई देनी, बड़ीही अच्छी मालूम देती थी। किनारों पर हाथियों का चुपचाप कतार बांधे खड़े रहना, कहीं ऊटों की बेडौल गर्दन का घुमाना वा जुगाली करना, घोड़ों का अपने थानों पर खड़े दाने खाना और हिनहिनाना और छोटी २ चिड़ियों का चांव २ करके रवमचाना, क्याही भला मालूम देता था। ठीक यही अवस्था मनुष्य के जीवन की है। कावं कावं करने वाले मनुष्य जगत में किसी काम के नहीं होते।

अपनेही राज्य सीमा में शिकार खेलने के लिये बादशाह का प्रस्तुत होजाना कोई कठिन बात न थी। रेजिडण्ट के आने के पहिले वह जी भर कर चिड़ियों का शिकार खेल चुके थे, जिस में उनको इतना आनन्द आया था कि उन्होंने स्वयंही बड़े और भयंकर पशुओं के शिकार खेलने की इच्छा प्रगठ की। एक दिन उन्होंने कहा——

बादशाह। "लखनऊ लौट चलने के पहिले, हम बनैले सूअर, हरिन और शेरों का भी शिकार खेलेंगे।

इतनी आज्ञा होतेही, डेरे उखाड़े जाने लगे और उत्तर की ओर कूच बोल दिया गया, क्योंकि इसी प्रांत में बनैले सूअर, शेर इत्यादि अधिक थे। बादशाह के साथ इतना आडम्बर और इतनी भीड़भाड़ थी कि जल्दी कूच करना सम्भव न था। इस शिकार में सिखाये और सधाये बारहसिंघे, बाज, और कठरों में शिकारी चीते भी गाड़ियों पर लदे हुए, साथ में थे। बादशाह की बेगमात, ढेमनियां, रखडियां, लौंडियां, बांदियां, पहरेदार-

नियां इत्यादि बन्द गाड़ियों में फौज की फौज जा रही थीं। बाडीगार्ड का रिसाला नीली वरदी पहिने हुए साथ था। हाथीयों पर बारबरदारी के सामान लदे थे और ऊंटों पर भी खेमे इत्यादि ढोये जाते थे और बहुत से साड़नी-सवार झुंड की झुंड जा रहे थे और घोड़ों की तो रेल पेल थी। इसके पीछे हमलोगों के साथ हैादे दार हाथियों की झुंड, ऊंट, घोड़े, पालकी, नालकी इत्यादि की भीड़ की भीड़ जा रही थी। अब खयाल करना चाहिये कि इतने बड़े लावलश्कर का कूच करना, मानो पलटनों का धावा था न कि शिकार का कूच, वास्तव में ऐसा जान पड़ता था कि कोई हिन्दुस्तानी राजा सैना के साथ धावा करता हुआ जा रहा है।

जिन२ गावों से होता हुआ हमारा लश्कर जाता, वहां के किसानों पर आफत आ जाती, वे लोग मारे भय के कांप उठते थे, क्योंकि उस प्रान्त में बादशाह और उनके अनुचर वर्ग इससे पहिले गएही न थे। हिन्दुस्तान में बादशाही लश्कर का दैारा प्रजा के लिए कष्टदायक होता है, क्योंकि लश्करी लोग समझते हैं कि उनको प्रजा पर अत्याचार करने का अधिकार है—प्रजा से बिगार कराना, उनसे लूट खसोट करना, मानो उनका धर्म ही है। इसी प्रकार बहुत कुछ उन बिचारों को दुःख भोगना पड़ता। इसके अतिरिक्त रास्ते में यदि कोई काम पड़ता, वा जहां२ सड़क न होती वहां यदि बादशाही लश्कर के लिए सड़क बनानी पड़ती, तो ये लोग स्त्री, पुरुष, लड़के, बूढ़े बेगार में पकड़े जाते और उनसे काम लिया जाता और जो कहीं कुछ भी देर हुई वा काम बिगड़ा, बस उनपर लात घूंसे पड़ने लगते।

इङ्गलिस्तानवासी इसे झूठ समझेंगे, पर हिन्दुस्त।
रियास्तों का जिन्हें कुछ भी अनुभव है, वे लोग इसको एयाने में
बात ठीक समझेंगे। हां

अस्तु, हमलोग उस झील पर पहुंचे, जो लखनऊ की पास वाली झील से ४० वा ५० मील पर थी। यह झील पहली झील से दूनी बड़ी थी और यहां का जङ्गल बहुतही घना था। ज्यों २ हम उत्तर की ओर बढ़ते जाते थे, हिमालय की बरफीली चोटियां सामने दिखाई पड़ती थी।

यहां की भूमि भी पहाड़ी थी, जङ्गल बहुत बड़ा था, बीच २ में कहीं २ खेती होती थी। इधर के प्रांत में मीलों तक सड़क न थी, परन्तु बादशाही लश्कर के लिए नवाब-वजीर की आज्ञा से सड़कें जल्दी २ बन कर तैय्यार थीं--ये सड़कैं हरे भरे धान के खेतों के बीच में से, गुंजान जङ्गलों और उत्तम २ खेतों में होती हुई, बनवाई गई थीं। बादशाह के आराम का ध्यान अधिक रक्खा जाता था और बिचारी गरीब प्रजा की पूछही न थी।

झील से कुछ दूर पर तम्बू, क़नात ठीक उसी प्रकार गाड़े गए थे, जैसा कि ऊपर लिखा जा चुका है। भेद केवल इतना था कि रेजिडेण्ड साहब का खेमा यहां नहीं लगा था क्योंकि वह नहीं आए थे। यहां भी बादशाह ने उसी प्रकार से शिकार खेला, जैसे पहिले झील पर खेला था, पर इस झील में दलदल अधिक थी, इसलिए उन्हें यहां जैसा चाहिए वैसा आनन्द प्राप्त न हुआ। इस झील में बगुले बहुत थे। अब बाज़ द्वारा शिकार की पारी आई और कई दिन तक हमलोग इसी से जी बहल रा
रहे। बादशाह को छोड़ कर हम में से किसी ने बाज़ क ना।

नियां इत[illegible]ार कभी नहीं देखा था। ज्योंही बाज़ छोड़ा जाता, बाडी[illegible]ार सा हवा में ऊपर को उड़ जाता, फिर शिकार को देखकर उसके चारों ओर धीरे २ चक्कर लगाता और फिर एकदम उसपर तीर सा टूट पड़ता। हमलोग नीचे खड़े तमाशा देखते रहते। ज्योंही बाज़ बिजली की तरह द्रुत गति से अपने शिकार पर आक्रमण करता, त्योंही उसे अपने पंजों से दबोच कर घायल कर देता। दोनों गड्डमड्ड होकर नीचे गिर पड़ते। यह दृश्य देखनेही योग्य होता था, एक बेर देखकर मनुष्य आजन्म नहीं भूल सकता। जिस समय हमलोग देखते कि बाज ने शिकार को दबोच लिया है, यह देखने को उसी दम हमलोग घोड़े फेंकते उसी ओर दौड़ पड़ते, कि देखें वह शिकार लिए कहां गिरता है। बडे २ बुड्ढे लोग भी यह तमाशा देखने को बेसुध होकर दौड़ पड़ते, रास्तों की ठोकरों और ऊंची नीची भूमि का उन को तनिक भी ध्यान न रहता और न गिरने पड़ने का भय रहता, बस उनको यह धुन रहती कि हमी पहले पहुंच कर देखें। हरएक की यही इच्छा होती कि पहले पहुंच कर अन्तिम युद्ध का तमाशा हमीं देखें। बाज और शिकार दोनों घायल और एक दूसरे से गुथे हुए गिरते थे, बाज़ पालनेवाले चट पहुंच कर बाज़ को उठा लेते और उसके पंजों से शिकार को छुड़ाते। ये लोग बड़ी चतुराई से तुरत जान लेते थे कि बाज को कहां चोट आई है, चोट खा जाने पर भी बाज़ का उत्साह और अपने शिकार के भाग के चखने की लालसा देखने योग्य होती में थे। बादशाह सलामत बहुत ही अच्छे शहसवार थे, इसलिए भी देर हुए शिकार बड़ाही प्रिय था और इसमें उन्हें बड़ाही

आनन्द आता था।

शिकार खेलने के पश्चात्, बादशाह के बड़े शामियाने में हमलोग भोजन करने बैठते, भोजन के वेही सब पदार्थ यहां भी होते, जो लखनऊ में रहते थे, हां मदिरा पान में यहां परिमिताचार न रहता। वैसेही सुस्वादु भोजन, वैसाही बड़ा मेज़ और भांति२ के पदार्थ, जगमगाती क़न्दीलें, चमचमाती तशतरियां, नाच गाना, सुन्दर२ स्त्रियों का मोरपंख की पंखड़ियों से मोरछल करना इत्यादि, सभी बातें वैसीही यहां ४० वा ५० मील पर थीं, जैसी लखनऊ के महल में। सारांश यह कि जङ्गल में मङ्गल हो रहा था।

इस स्थान में जङ्गली सूअर या शेर न थे। इसलिए बनैले सूअर और शेर के शिकार के लिए, हमें और उत्तर की ओर जाने की आवश्यकता थी, परन्तु इस स्थान में हरिन बहुत थे, अतएव यह विचार किया गया कि इनका शिकार तीन प्रकार से खेला जाय--अर्थात पहले सधाए बारहसिंहों द्वारा, फिर चीतों से और अन्त में पैदल वा घोड़ों पर चढ़ कर। इस सप्ताह के लिए यही दिनचर्या निश्चित हुई। अब बादशाह सलामत भी रोज रोज के बाज के शिकार से उकता गए थे।

अवध में पालतू बारहसिंहों द्वारा जैसा शिकार खेला जाता है, उसको तो हमलोगों ने जानना क्या सुना तक न था, इसलिए उसका वर्णन सविस्तर लिखा जाता है। बाज द्वारा चिड़ियों का शिकार खेलना तो सभी देश में होता है और लगभग एकही प्रकार का होता है, पर पलुए बारहसिंघों द्वारा शिकार खेलना हमलोगों के लिए एक अनोखी बात थी।

सवार होकर हमलोग झील के पासही एक ऐसे मैदान में पहुंचे, जो एक जङ्गल से मिला हुआ था। यह हमारे काम के लिए बड़ीही सुन्दर जगह थी। इस स्थान पर छोटे और अ-हिंसक जानवर बहुत थे और हरिनों से तो यह जङ्गल भरा पड़ा था। बड़े २ चतुर हँकुए इस जङ्गल में घुसे, जो बिना डराए और भड़काए हुए हरिनों के झुण्डों को हांक कर उक्त मैदान में ले आये, जहां पर हमलोग छिपे हुए बैठे थे। जब हरिनों के झुण्ड जिनमें बड़े २ बलिष्ट नर हरिन भी होते जङ्गल के किनारे पर आजाते, तब लोग सधाए बारहसिंघों को छोड़ देते।

ये पालतू नर-बारहसिंघे दस वा बारह होते थे। ये पशु खूब जानते थे कि वे यहां क्यों लाए गए हैं, इसलिए वे जङ्गल की ओर धीरे २ अकड़ते हुए जाने लगते। जङ्गली झुण्ड के नर और बलवान हरिन जब इन्हें अपनी ओर आते देखते, तब उनमें भी जो कट्टर हरिन होते वे इनकी ओर आते। उस समय यह नहीं कहा जा सकता था कि वे मेल मिलाप करने वा युद्ध करने आते हैं। बस थोड़ीही देर में दोनों गुथ जाते। सिर से सिर, सींघ से सींघ को टक्कर देकर बड़ी शूरता के साथ जङ्गली हरिन और पालतू बारहसिंघे आपुस में भिड़ जाते और खूबही जोर लगाते, बड़ेही बीरता से लड़ते और एक दूसरे की जान लेने वा जान देने को तुले रहते। जब उनमें मुठभेड होजाती, हमलोग भी पैदल वा घोड़ों पर सवार, आड़ में से निकल कर, सामने आ जाते। हरिनों की वह झुण्ड जो जङ्गल के किनारे खड़ी युद्ध देखती रहती, हमलोगों को देख कर हवा हो जाती, पर ये लड़नेवाले मैदान में बराबर अड़े रहते।

थोड़ी देर तक इन सभों में खूबही जुधमजुधा होती, इतने में कुछ हिन्दुस्तानी शिकारी मैदान में आते। उस समय हमलोग यह नहीं जानते थे कि वे लोग क्यों आए हैं, यदि जानलेते तो हम उन्हें उधर कदापि न जाने देते। धीरे २ ये लोग जङ्गली हरिनों के भागने का रास्ता रोक लेते, और कुछ लोग चुपके २ जङ्गली हरिन के पास पीछे से पहुंच जाते, जो बेसुध अपने युद्ध में लगे आपुस में धक्कमधुक्का करते रहते थे। इतने में इधर से उन शिकारियों ने उन्हें घायल कर दिया। हाय, जब वे घायल होजाते, तब वे बिचारे थरथराते हुए लुढ़कने लगते और उधर से बारहसिंघों की लगातार ठेलम ठेल से भूमि पर गिर पड़ते। जहां ये एक बेर गिरे फिर ये उठ नहीं सकते थे।

जब जङ्गली हरिन गिर चुकते, तब पालतू बारहसिंघे बुला लिए जाते। अपना काम तो वे करही चुके थे, अपने रखवालों की आवाज सुनते ही कुत्तों के सदृश वे चुपचुपाते चले आते। किसी किसी के छातियों मे जो घाव लगे थे, उनसे प्रगट होता था कि उनका छुटकारा भी सहज में नहीं हुआ है। घोड़ों पर से हमने देखा कि ये लोग खुशी २ ऐंड़ते मैंड़ते, इधर उधर सींघें झटकारते, कभी २ हरी घास पर एक आध मुंह मारते और अपने विजय प्राप्ति पर अठलाते, चले जाते थे। इतने लड़ने पर भी अभी उनका जी नहीं भरा था, कभी २ तो वे आपुस में ही मुठ भेड़ करने पर उतारू हो जाते, मानो अभी लड़ने का दम खम उनमें बाकी है। अब गिरे हुए हरिनों की अवस्था देखिए, जो बड़ीही करूणाजनक होती। अब इनमें वह शक्ति, वह कूद फांद, वह सींघों का झटकारना, वह छलांग मारना, वह फुर्ती

इत्यादि नाम मात्र को भी शेष न रह गई थी। बिचारे घायल, चौकड़ी भूले भूमि पर पड़े अपनी विशाल काली आंखों से हमें देख रहे थे, उनमें हिलने की भी शक्ति न थी और उनकी पत्थराई आंखों से प्रगट होता था कि अब उनका अन्तिम् समय है, तब उनका तेज क्षीण होता जाता है। ऐसा मालूम देता था कि मानो वे लोग हमारी निर्दयता और कायरता पर शोक प्रगट करते हैं। यह धर्म युद्ध न था, यथार्थ रीति से वे परास्त नहीं किए गए, किन्तु अन्याय और कुटिल नीति से घायल किए गए थे।

इङ्गलिस्तान में जब कुत्तों की झुण्ड और मनुष्यों की भीड़ किसी अभागे खरहे के पीछे दौड़ती है और ये कुत्ते जब बड़ी निर्दयता के साथ उस बिचारे छोटे पशु के चियड़े २ कर डालते हैं, तब इसे देख कर किस निर्दयी को दया नहीं आती। वहां मुझे कभी भी इतनी करुणा नहीं उपजी थी जितनी कि इन साहसी, विशालाक्षी और वाक्यहीन पशुओं की दशा को देख कर, मेरा रोमांच हो आया था। अवध के प्रचलित शिकार की विधि देखकर मेरा जी कांप उठता था। बादशाह सलामत का मन्तव्य पाकर इन सिसिकते पशुओं के सिर काट दिए गए, क्योंकि इन घायल पशुओं को उसी अवस्था में रहने देना और भी कठोरता थी। यही उचित था कि उनको दुःख और सिसिकने से शीघ्र ही मुक्त कर दिया था।

इन पालतू बारहसिंघों का तमाशा मैंने तो इतना ही देखा था, पर सुना है कि ये लोग जीते मृगों को पकड़वा भी देते हैं। वह इस प्रकार से कि जब दोनों युद्ध करते रहते हैं, तब दो

बलवान मनुष्य रस्सियों के फन्दे लिए हुए जङ्गली मृग के पीछे चुपके २ जाते और चतुरता के साथ फन्दे उनके सींघों पर फेंक कर खींच लेते हैं, जरा से झटके में फन्दे कस जाते और मृग गिर पड़ते हैं। यदि वे नहीं गिरते, तो उन मनुष्यों पर झपट पड़ते हैं, ऐसी अवस्था में एक आध आदमी के जान पर भी बन आती है। इनके फँसाने में एक कठिनता और भी होती है, वह यह कि फन्दे डालती समय यह सम्हालना पड़ता है कि कहीं पालू बारहसिंघे न फँस जांय। इस लिए जब तक वे लोग सिर से सिर, सींघ से सींघ, भिड़ाए लड़ते रहते हैं, तब तक फन्दे नहीं डाले जाते, हां, बीच २ में जरा दम लेने को जब वे कुछ हटते हैं, उस समय यह काम किया जाता है।

दूसरे दिन शिकार में सधाए चीते छोड़े गए। इङ्गलिस्तान के पश्वालय में चीते हैं, अतएव उनके विवर्ण देने की कुछ आवश्यकता नहीं जान पड़ती है। चीते और तेन्दुओं में उनके सिर की बनावट का भेद है। तेन्दुए का सिर छोटा और भोंड़ा होता है और इनके खाल पर हलके काले रङ्ग के चकत्ते पड़े रहते हैं। तेन्दुए से चीता कुछ बड़ा और बलिष्ट होता है। मैं ने सुना है कि सिलोन के चीते जब भूके होते हैं, तब वे जङ्गल से निकल कर बस्ती में भी घुस जाते हैं और बूढ़े, मर्द, स्त्री वा बालक को उठा ले जाते हैं। यह सच है कि सिलोन के चीतों के विवरण जो शिकारियों ने लिखे हैं, उन्हें पढ़ कर लोगों को विश्वास नही होता, पर उनके डीलडौल और बल को देख कर सन्देह नहीं रह जाता। हिन्दुस्तान के उत्तर प्रांत में वैसी घटनाएं कम सुनने में आती हैं, यदि होती भी हैं, तो शेर द्वारा

होती हैं, क्योंकि यहां आदमियों को प्रायः शेर ही ले जाते हैं।

कठरे से शिकार के पास तक चीते को ले जाना सहल काम नहीं है। चीतों के पालने वाले इनके गरदन में लोहे के सिक्कड़ डाले हुए कुत्तों के समान ले चलते हैं, थोड़ी देर तक तो वे सीधेपन से चलते हैं,पर जहां उनका ध्यान दूसरी ओर गया, अथवा बन में से कोई शब्द उनके कान में पहुंचा, वा भूमि में से किसी प्रकार की गन्ध उनके मस्तिष्क में समाई कि तहां वे चौकन्ना हो, ठिठक २ कर चलने लगते और सिर उठा २ कर भौचक्केपन से इधर उधर देखने लगते हैं, यदि तनिक भी देर होजाय तो बस वे आपे से बाहर हो जाते हैं, फिर सम्हालना कठिन हो जाता है। परन्तु उसके संरक्षक चतुर रहते हैं। जहां उन्हों ने किसी चीते को चौकन्ना होते देखा, तहां नारियल जिसमें नोन छिड़का रहता है और जिसे रखवाले बाएं हाथ में एक दस्ते से बंधा हुआ लिए रहते हैं, झटपट उसके नाक पर लगा देते हैं, जिसे वह चाटने लगता है और नमक के प्रभाव से जो गन्ध उसके मस्तिष्क में समाई रहती है, दूर हो जाती है, फिर वह सिधाई से चलने लगता है। जब जब आवश्यकता पड़ती है,वे ऐसाही बराबर करते रहते हैं जिससे वह रस्ते पर आ जाता है और दुम * दबाए सीधा चलने लगता है।

* हैदरअली बादशाह के पोते "प्रिंस गुलाम मोहम्मद" ने जो 'हैदरशाह का इतिहास' सन १८५५ में छपाया है, उसमें लिखा है कि—"जब हैदरअली को अवकाश मिलता, तब वे अपने महल की खिड़की में आ खड़े होते और हाथियों के झुण्ड जो नीचे खड़े रहते उन्हें (सूंड उठा कर) सलाम करते। बादशाह के सामने आने पर पीलवान चिल्ला कर कहता—"श्रीमान! महाराज को हाथी मुजरा करते हैं"

चीता पालनेवाला चीते को लेकर छिपता हुआ और शिकार की दृष्टि से बचता हुआ, जब हरिनों के कुछ पास पहुंच जाता, तब वह चीते को शिकार दिखा कर छोड़ देता। उस समय उनकी दौड़ देखने योग्य होती है। हरिन अपनी जान लेकर चौकड़ी भरता हुआ भागता है—उस समय वह कुछ नहीं देखता, नीचा ऊंचा, खाई खंदक लांघता, उछलता, कूदता, चौकड़ीं भरता, जी तोड़ कर दौड़ता चला जाता है। इधर चीते का खून शिकार को भागते देखकर खौलने लग जाता और यह भी उसके पीछे झपट पड़ता, क्योंकि हरिन इसका स्वाभाविक भक्ष है। यह भी फलांगें मारता बिना किसी रोक टोक का खयाल किए हुए हरिन के पीछे २ दौड़ा जाता है, कभी बिल्ली की तरह झाड़ियों को फांदता, नालों में घुसता, जल में पैरता, दौड़ता चला जाता है। यह तमाशा एक बेर देखकर मनुष्य फिर कभी भूल नहीं सकता। इस समय घोड़ा दौड़ाना भी सहज नहीं है। यद्यपि बादशाह के आराम के लिए हर तरह से भूमि सुधार दी गई थी, तौभी बीच २ में गड्ढे, ऊंचे नीचे टीले, जङ्गली झाड़ झंकार पर से घोड़ों का दौड़ाना, कोई साधारण बात नहीं होती। ऐसे अवसर पर आसन जमाए घोड़ों पर बैठे

और उसी दम हाथियों के झुण्ड, जो गोलार्द्ध कतार से खड़े रहते, सब के सब तीन बेर झुक कर सलाम करते। शिकारी चीते भी उनको सलाम कराने केलिए लाए जाते थे। इन चीतों पर कारचोबी की झूलें भूमि तक लटकती रहतीं और उनके सिर पर से कमखाब की टोपी पहना कर आंखें बन्द कर दी जातीं, जिसमें वे कहीं हिसकता न करें। हैदरअली अपने हाथ से इनको मिठाई खिलाते थे, वे इतने हिले डुले थे कि वे बड़ी निपुणता के साथ पंजों से लेकर मिठाई खाते।

रहना हँसी ठट्ठा नहीं है। हमलोगों की सवारी में बड़े जान-दार और उत्तम २ घोड़े थे, जो हमलोग के समान शिकार पर दृष्टि जमाए उधरही बड़ी बेग से जा रहे थे, तौभी दलदल और रेतीली भूमि और झाड़ियों के कारण उनका दौड़ना और मृग और चीते को दृष्टि से ओझल न होने देना, कठिन पड़ जाता—सच है, शिकार खेलना साधारण काम नहीं है। सा-रांश यह कि बड़ी कठिनता से सम्हलते सम्हालते शिकार के साथ २ हमलोग भी घोड़े फेंके चले जा रहे थे, कहीं सूखा और बेहंगम नाला फांदना पड़ता, कहीं घास और झाड़ियों में उल-झना पड़ता था, जिनपर घोड़ों के भी कदम भलिभांति नहीं जम सकते थे, तिसपर भी हमलोग दौड़े ही चले जाते थे। इतनी कठिनाइयों पर भी चीता हवा में उड़ा चला जाता था। झाड़ियों को पैर से छूते ही वह ऐसा उड़ता था, मानो भूमि पर उसका पैरही नहीं पड़ता था। जाते २ हमलोग एक खुले मैदान में पहुंचे, जहां दो तीन फीट ऊंची छोटी २ झाड़ियों का जङ्गल था। इन झाड़ियों में भी कभी दाएं, कभी बाएं, गझिन झाड़ियों को बचाते हमलोग घोड़े दौड़ाए चले जा रहे थे।

अन्त में हरिन दौड़ता २ थक गया था और जङ्गल भी निकटही आगया था—जो कहीं हरिन जङ्गल तक पहुंच जाता तो उस गुंजान जङ्गल में वह हमारे हाथ कभी नहीं लगता, क्योंकि उस गझिन वन में घोड़े नहीं जा सकते थे। परन्तु वहां तक हरिन पहुंचने ही न पाया। इतनी दूर तक के पीछा करने से थकथका कर वह चौकड़ी भरना भूल गया और मारे भय के घबड़ा कर एक झाड़ी में घुस पड़ा, कदाचित उसने इसी को

चीते द्वारा हरिन का शिकार।
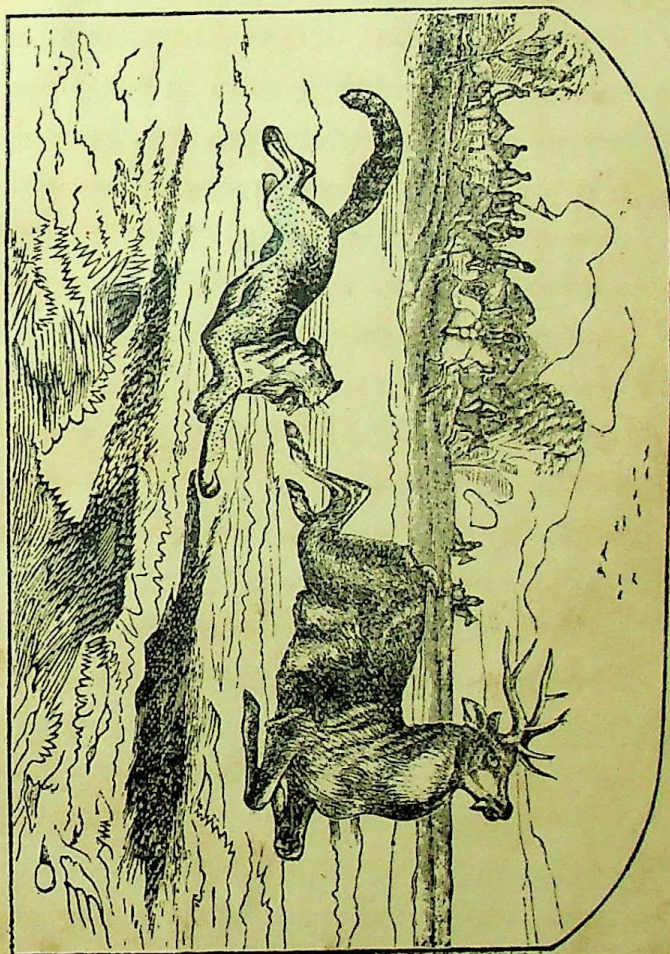
उस बन का एक भाग जाना हो। वह बिचारा चौकड़ी भर कर उसमें घुसाही था कि उसकी सींग एक लता में फँस गई और वह छुड़ा कर भागाही चाहता था कि इतने में चीते ने उसे चांप लिया। अब क्या था।

इस समय बादशाह सलामत बड़ेही प्रसन्न थे, क्योंकि वे उसके ठीक छाप वैठने के समय निकट पहुंच गए थे। हमलोगों से लोमड़ी के शिकार में सब से पहले शिकार के पास पहुंचने की उत्कण्ठा और उसकी पोंछ काट लेने का वर्णन सुन चुके थे, अतएव उन्होंने भी झट बढ़कर हरिन की पोंछ काट ली और अपने शिकारी टोपी में खोंस ली॥

चौथा अध्याय।

गपशप

इस समय हमारे डेरे, मिसरिख नामक गांव से थोड़ी ही दूर उत्तर की ओर गोमती और उसके उपनदि कथना के बीच की भूमि पर,लगे थे। एक दिन हम धावा करते हुए डेरे से दूर निकल गए। इस समय मुझे यह तो स्मरण नहीं आता कि हमलोग चीते के साथ अथवा हरिनों की खोज में गए थे। जाते जाते हमलोग एक जलाशय के किनारे पहुंचे, जिसके तट पर महीन स्वेत रेतीली भूमि थी। देखने में यह महीन पिसे हुए शोरे के समान स्वेत थी और उसका स्वाद तीक्षण लवणमय और झालदार था। हिन्दुस्तानी भूपरीक्षकों के कथनानुसार

इसके विषय में कई कल्पनाएं सुनने में आईं। मैं भूगर्भ विद्या विशारद नहीं हूं जो इस भूमि के विषय में कुछ लिखूं, इसलिए जो हमलोगों ने वहां दुख भोगा उसका वर्णन मैं यहां करता हूं। लोग मुझे विश्वास दिलाते हैं कि वह एक प्रकार का महीन बालू था, जो प्रायः समुद्र के किनारों पर पाया जाता है, केवल अन्तर यह था कि उसकी रंगत अधिक श्वेत थी, पर मुझे याद है कि उस समय मैंने इस बात पर विश्वास नहीं किया था कि यह केवल एक प्रकार की रेत ही है। इस पोखर का जल भी खारा था। पहले तो हमलोग बड़े बेग से जारहे थे, पीछे धीरे धीरे चलने लगे, और ज्यों ज्यों आगे बढ़ते गए, त्यों २ घोड़ों की टापों से यह रेतीली धूल हवा में उड़ कर चारों ओर छाती गई। इतना अच्छा था कि उस समय वायु का वेग न था, नहीं तो हमलोग अपनी आंखें खोबैठते। अब यह महीन रेत उड़२ कर आंखों और कानों में भर कर झाल के समान लगने लगी-यद्यपि इसके कण बहुत ही महीन थे, तौभी आंखों में चुभने लगे और नाक में घुस कर चुनचुनाने लगे। हमारे घोड़ों पर भी इनका प्रभाव पड़ा-हिनहिनाते, फुंकार मारते और खांसते हुए उनका नाक मे दम आगया। रह रह कर वे बिचारे जल की ओर झुक झुक पड़ते, यद्यपि जल ऐसा खारी था कि पीने योग्य न था।

इस कष्टदायक यात्रा से हमारे शिकार की समाप्ति का बीज पड़गया। यद्यपि मुझे इस बालू का वैज्ञानिक नाम अब मालूम होगया है, तौ भी मैं यहां इसे शोरे की महीन धूल ही लिखूंगा। इसने बादशाह सलामत के भी आंख, नाक को न

छोड़ा। उनपर भी इसका दुष्ट प्रभाव वैसाही पड़ा, जैसा हम-लोगों पर। खिजला२कर जहांपनाह हिन्दुस्थानी में और कभी२ अंगेरेजी में ऐसी गालियां देते, जिनका उनके मुंह से निकलना अन्य अवसर पर कदापि सम्भव न था। हमारे गोष्टि में से एक साहब ने, जो वैज्ञानिक भी थे, कहा कि यह भी हमारा अहोभाग्य है, जो अचानचक हमलोग पृथ्वी के एक ऐसे अनूठे स्थान पर आगए हैं, जो भूगर्भ विद्या के पण्डितों के लिए एक बड़े लाभ की चीज है और जिसके देखने के लिए योरोपवासी दूर दूर की यात्रा का कष्ट उठाते हैं। उनके इस बात से हमलोगों को ढाढ़स तो जरा बढ़ गई थी, परन्तु हम-लोगों की अवस्था उससमय यह थी कि छींकते, खांसते, आंख मलते और उनकी बातें सुनते चले जा रहे थे। यद्यपि सब लोगों ने आंखें बन्द करली थीं, तौभी कण ऐसे महीन थे कि पलकों के अन्दर घुसे जाते थे और आंखें कड़ुवाने लगी थीं। बड़ा डर तो यह था कि कहीं हमारे घोड़े अन्धे न होजायं।

यदि कभी कोई पूछ बैठे कि इस कष्टदायक रेत में फँसते ही हमलोग पीछे क्यों न लौट पड़े, जानबूझ कर आगे ही क्यों बढ़ते चले गए? ऊपर के वृत्तान्त से आपलोगों पर यह प्रगट होगया होगा कि इस खारी भूमि में जाने का न हमें कोई विशेष प्रयोजन था और न वैज्ञानिक अन्वेषणा ही करनी थी, लहु लगाकर कुछ शूर बीर तो बननाही न था, पर अब तो यही अवस्था हमलोगों की थी कि गले पड़ी वजाये सिद्ध। हमलोग निस्सन्देह उससे बचनाही चाहते थे, पर अब कैसे वहां से निकल सकते थे, क्योंकि हमलोग वहां एकदम नहीं पहुंचे थे। हम-

लोग अचानचक ऐसी जगह आफँसे थे कि कोई भी नहीं जानता था कि यह कष्टदायक रेत कहां से आरम्भ हुई और कहां पर समाप्त होगी। हमलोग धीरे२ जाकर उसके बीच में फँस गए। पहिले तो कहीं २ इधर उधर इन रेतों के टुकड़े मिले, बीच २ में मटीली भूमि भी थी, और कहीं ऐसा मालूम देता था कि मानो इस रेत पर मट्टी का पुचारा दिया हुआ है, जिससे रेत नीचे दबी पड़ी है। इसी प्रकार कुछ दूर जाकर हमलोग एकदम ऐसे स्थान पर पहुंच गए, जहां घोड़ों के टापों से यह महीन धूल उड़ उड़ कर चारों ओर छागई, अब हमलोग बीच में आपड़े थे और रेत उड़ उड़ कर हमलोगों के नाक, आंख में पड़ कर चड़पड़ाने लगी। उस समय जो विचार किया तो पीछे लौट चलने से आगेही बढ़ना हमें उचित जान पड़ा।

सांझ को जब हमलोग लौट कर अपने डेरों पर आये और भोजन के समय एकत्रित हुए, उस समय तक भी बादशाह सलामत पर उस रेत के झाल का प्रभाव कुछ न कुछ बना रहा और उनके आंख और नाक में अब तक कण चुभरहे थे, वे बेकल, दुखित और रुष्ट बैठे थे। राजनापित की मसखरी, अनुचरों की बातचीत, वा नाच गाने से भी उनका चित्त प्रसन्न नहीं होता था। उनको इस बात पर क्रोध था कि उनको ऐसे स्थान की सूचना पहिलेही क्यों न देदीगई थी। हमारे एक विज्ञानविद् मित्र ने निवेदन किया कि उस स्थान से बड़ा लाभ हो सकता है, बादशाह ने उसे कान लगाकर सुन तो लिया, परन्तु उसपर अधिक ध्यान नहीं दिया और न कोई अपनी अनुमति प्रगट की, उनका चित्त दुखित और व्याकुल हो रहा था। आज की

रात को वे जरा जल्दीही अन्तःपुर में पधार गए और हमलोग भी अपने २ डेरों में चले गए। ऐसी अवस्था में उन बिचारी स्त्रियों का रक्षक ईश्वरही है, जो कहीं जोर से छींक दे, वा ऐसी कोई बात कर बैठे, जिससे स्वतंत्र और अलबेले राजा का क्रोध बढ़ जाय। हिन्दुस्तानी रजवाड़ों में जोर से खांसने, खखारने के लिये कठिन दण्ड दिया जाता था*। हिन्दुस्तान में बड़े घरों के जनाने में भी प्रायः ऐसे दुष्टकर्म होते ही रहते हैं। इसके रोकने का कोई उपाय नहीं है। सरकारी मजिष्ट्रेट यह जानते हैं, तौ भी कुछ नहीं कर सकते। हिन्दुस्तान के जनानखाने पृथक और गोपन रहते हैं, अन्दर के वृत्तान्त लौंडियां बांदियां यदि बाहर आकर प्रगट करदें, तो उनको प्राण दण्ड दिया जाता है। और यह दण्ड प्रायः वही स्त्रियां देती, हैं जिनके पक्ष की बात बाहर प्रतक्ष कर दीगई है। यहां के उमरा और धनाढ्य लोग तो बड़ी क्रूरता के दण्ड दिया करते हैं, और जो कहीं बादशाह किसी पर क्रुद्ध हुए, तो बिना बिचारे ही प्राण दण्ड की आज्ञा देदेते हैं। एक हिन्दुस्तानी दुष्कर्मी राजा ने अपने एक अङ्गरेज़ मित्र सालिष्टर से कहा था कि "मेरे घर में बच्चा होने वाला है और यदि मेरी स्त्री के लड़का न हुआ लड़की हुई, तो मैं मारे कोड़ों के उसका प्राण ही लेलूंगा"। कुछ दिन पश्चात उसके लड़की हुई, इसके दो दिन पीछे उस स्त्री की लाश जलाई गई। वह बिचारी क्योंकर मरी, इसका पता न चला। यह बात उस समय खुली, जब एक वसीयतनामे के मुकदमे में सालिस्टर

* अवध के शाही दर्बार में जोर से छींकने का दण्ड नाक काट लेना था।

साहब को इस बात की आवश्यकता पड़ी कि वह उक्त राजा को पागल साबित करें।

अब तक हमारे शिकार में ऋतु अच्छा रहा। परन्तु उसी रात को जब (हमलोग धूल फांक कर) सो रहे थे, मूसलाधार पानी बरसने लगा। बादल कड़क २ कर गरजने लगे और बिजली इतनी तीव्रता के साथ चमकती थी कि ऐसा चमकना सिवाय इन गर्म देशों के और देशों में कम देखने में आता है। हम पांचों व्यक्ति एकही खेमे में सो रहे थे, हमारे सिर पर बादल गड़गड़ा रहा था और बिजली इतनी जोर से चमक रही थी कि उसकी चमक खेमे के अन्दर तक आती थी। दो २ मिनट पर बिजली की दमक से दोपट्टे खेमे के प्रत्येक पदार्थ तक दिखाई देजाते थे, और फिर ऐसा अन्धेरा छा जाता कि हाथ को हाथ नहीं सूझता था।

आधी रात के उपरान्त जरा बादलों की गरज कम हुई, तो हवा की सनसनाहट, वायू की लपटझपट दैत्यनाद के समान सुनाई देने लगी। उसके झोंके और थपेड़ों से हमारे खेमे झुक झुक पड़ते। कभी एक ओर गिरने लगते, कभी दूसरी ओर, और कभी हवा से फूल कर उड़ जाने की चेष्टा करते, डेरों की चोबों तक थर्रा रही थीं। हमलोगों को पूरा डर था कि खेमा अब गिरा अब गिरा। खेमों के कपड़ों तक में हवा भर जाती थी। हम लोग उठ बैठे और खेमों के गिरने ही की बातचीत कर रहे थे, परन्तु हमारा डर निर्मूल था, क्योंकि हमारे खलासियों ने पहिले ही से और मेखें गाड़ रस्सियें कस दी थीं और डेरों को जकड़बन्द कर दिया था। आंधी बवंडल और पानी से सारे

लश्कर में हलचल मची हुई थी। जब जरा बादल का गरजना बन्द होता, तब घोड़ों की हिनहिनाहट, ऊटों की बलबलाहट, हाथियों की चिंघार और आदमियों की चिल्लाहट सुनाई देतीं।

जब बादल की घड़घड़ाहट कम होती, तब हमलोग आपुस में कहते, 'मालूम होता है कि कुछ जानवर छूट गए हैं"। अन्त में आंधी पानी कम हुआ, परन्तु लश्कर में हल्लागुल्ला कम होने के बदले अधिक होने लगा। हमलोगों ने सोंचा कि "कदाचित् बहुत से जानवर छूट गए हैं। हमलोगों को यह डर था कि कहीं हाथी इधर आकर रस्सियों में न उलझ जायं, नहीं तो खेमों की खैरियत नहीं।"

हमलोग बैठे ईश्वर से प्रार्थना कर रहे थे कि कहीं कोई जानवर बहक कर इधर न आजाय और हमने नौकरों से भी कह दिया था कि वे देखते भालते रहें। हमलोग फिर लेट रहे। हमलोगों के खेमे बहुत ही उत्तम थे, मूसलाधार वर्षा होजाने पर भी इसमें पानी नहीं टपका। हमलोग मीठी नींद के झोंके में पड़े सो रहे थे, अभी अच्छी तरह सोने भी न पाये थे, बाहर हुल्लड़ बढ़ताही जाता था, इसलिये मैंने अपने खिद्मतगार से कहा, "बखशू, जाकर देख तो यह क्या गोलमाल देर से हो रहा है।"

उधर बखशू गयाही था कि इतने में बाहर से एक आदमी ने हमारे नौकरों को बुलाया। हमलोगों ने सुना कि कोई कह रहा है कि 'जहांपनाह का सन्देसा लेकर चोबदार आया है।'

सन्देसा यह था कि कप्तान साहब की जल्द बुलाहट है। यह सुनतेही हमलोग उठ बैठे और अपना अपना खयाल

दौड़ाने लगे कि ऐसी कौनसी बिपत्ति आगई, जो इस बेवक्त आंधी पानी में कप्तान की बुलाहट हुई। चोबदार से जो पूछा तो उसने कहा, "मुझे मालूम नहीं कि क्या काम है। हां, इतना जानता हूं कि शाही डेरों में हुल्लड़ मच रहा है और एक डेरा हवा से गिर गया है"। बस इतनीही बात पर नाना प्रकार के सोच हमारे जी में उठने लगे, "कहीं ऐसा तो नहीं है कि नवाब वजीर पर, जिनके सपुर्द डेरों का इन्तजाम था, बादशाह सलामत ख़फा होगए हों और उनको पकड़ कर प्राणदण्ड की आज्ञा देदी हो। कहीं ऐसा तो नहीं है कि 'शाहीहरम' में कोई भयानक घटना हो गई है।" प्रत्येक व्यक्ति अपनी अलग अलग खिचड़ी पका रहे थे। फिर हमने सोचा कि इस बूझबुझौवल से क्या सिद्ध होगा, जो होगा थोड़ी देर में मालूम होजायगा।

कप्तान साहब के चले जाने पर मेरा खिमदतगार लौट कर आया और कहने लगा कि बादशाही डेरों में चलने की तैयारियां हो रही हैं, परन्तु यह पता नहीं लगा कि क्यों। जब उस ने एक जमादार से इसका कारण पूछा, तो उसके उत्तर में उसे एक घूंसा मिला। इतनी बात सुनकर हमें संतोष न हुआ। पानी अभी तक झमाझम बरस रहा था, इसलिये हमलोग का साहस न पड़ा कि बाहर जाकर स्वयं पता लगा आवें। अन्ततत्वा कप्तान साहब लौट कर आये और कहने लगेः—

"भाईयों मैं तो जाता हूं, तुमलोग अपने जान माल की रक्षा करना"।

हमलोग सब एक साथ बोल उठे, "अरे भाई, कहां जाते हो? कौन कौन जाता है?"

कप्तान। "जापनाह की सवारी आध घण्टे में लखनऊ को कूच कर देगी और उनके साथ उनकी फौज और बेगमात इत्यादि भी चलदेंगी। बादशाह साहब बहुत खिजलाये हुए हैं और अभी लखनऊ वापस जाना चाहते हैं। कूच की आज्ञा देदी गई है। देखो, मैं फिर कहे जाता हूं कि अपने माल असबाब की खूब देखभाल रखना, नहीं तो देहाती लोग लूट लेंगे।" यह कहकर कप्तान साहब अपना बोरिया बँधना बँधवाने लगे, कभी किसी अरदली को कुछ आज्ञा देके, और कभी किसी को कुछ असबाब सपुर्द करके, जाने को वह लैस होगए।

मैंने पूछा। "क्या सचमुच गांववाले माल असबाब लूट लेवेंगे?"

कप्तान। 'यदि चैाकस रहोगे तब तो वे न लेजायेंगे। ये देहाती लोग, जिन्होंने बादशाही लशकर के हाथ इतना कष्ट भुगता है, जहां सुन पावेंगे कि बादशाह सलामत और उनके गारद के सिपाही चलदिये, बस वे डेरों पर छापा मारेंगे। पहिले ऐसा प्रायः सुनने में आया है।"

बादशाह की सवारी के साथ उसी वक्त हमारा चल खड़े होना कठिन था, क्योंकि हमारे साथ काफी कहार न थे। फिर बादशाह का यह भी हुक्म था कि हमलोग नवाब-वजीर के साथ आवें। पचास साठ मील की यात्रा अवध में इतनी सहज नहीं है, जितनी की यूरोप में उत्तम सड़कों के कारण से होती है। हम में से हर एक के साथ एक एक हाथी और एक एक वा दे। २ घोड़े थे, परन्तु पालकी वा छायेदार सवारी का पूरा प्रबन्ध न था, क्योंकि इसके लिये कहारों की डाक बैठानी पड़ती

थी, तब कहीं दिन में हम चल सकते थे। इसके अतिरिक्त जो असबाब हम साथ न लेजा सकते, वह लुट जाता। यदि गांव वाले न लूटते, तो नवाब के आदमी उन्हें कब छोड़ते।

अब सिवाय ठहर जाने के हमारा वश ही क्या था। यह विचार हुआ कि सूर्य्योदय तक हमलोग यहीं पड़े रहें और दिन उगने पर देखें, कि नवाब कितने आदमी हमें देते हैं और हमारे लिये वह क्या बन्दोबस्त करते हैं।

थोड़ी देर बाद बादशाह की सवारी चलपड़ी। हम खेमे में बैठे घोड़ों की हिनहिनाहट और कहारों का "दायां,बायां," "हूं हां" और हाथियों के घंटों की आवाज सुन रहे थे। सवारी तेजी के साथ जा रही थी,ज्यों ज्यों वह दूर होती गई, उनकी आवाज मध्यम पड़ती गई और अन्त को फिर सन्नाटा छागया। बादशाह का हुक्म भी 'नादिरशाही हुक्म' होता था। इधर उनके मुंह से बात निकले, उधर वह काम होजाना चाहिए। वह आज्ञा क्या देते थे, मानों हाथ पर सरसों जमाते थे। अब जो चलने की सूझी, बस कूच का डंका बजगया। सवारी जो बढ़ी सो बढ़ी, अब कहां रुकती है।

अब भी रिमझिम रिमझिम बूंदें पड़ रही थीं। रात अंधियारी और डरावनी थी। हमारे खेमे के बीच में एक टेबुल पर एक लम्प बल रहा था और मेघवाष्प के कारण खेमे की चीजें धुंधली दिखाई देती थीं, हम चारों आदमी खेमे में इस भांति सोये हुए थे कि दो खेमे की एक ओर और दो दूसरी ओर, हमारी पालकियां खेमे के दर्वाजे पर रक्खी हुई थीं। केवल मेरी पालकी अन्दर थी। कप्तान साहब की बात हम भूले न थे,

हमलोगों ने विचार किया कि हममें से एक एक आदमी पारी पारी से घण्टा २ भर जागता रहे। हमने दो पिस्तौल भर कर टेबुल पर रखलीं और एक२ तलवार अपने पास लेली। पहिले एक साहब, जो आस्ट्रिया की फौज में अफसर रह चुके थे, पहरा देने बैठे और चुरुट पीने लगे। खेमे के अन्दर बहुत से खिद्‌मतगार फर्श पर पड़े सो रहे थे, पर उन पर भरोसा नहीं किया जा सकता था, क्योंकि इन लोगों के जी में उन देहातियों का बड़ा डर समाया हुआ था, जिनकी दुरगति गाली-गलोज, मारपीट सभी कुछ उन लोगों ने दिन में की थी।

हमारे फौजी मित्र खेमे में ऐसे स्थान पर डटे बैठे थे कि दोनों दर्वाजों की चौकसी कर सकते थे। मुझे नींद आ रही थी और उसी नींद भरी आंखों से मैंने उनको, जिस सजधज से कि वे बैठे थे, देखा था, उसकी कुछ याद अबतक बनी है। वह आराम कुर्सी पर तकिया लगाये, मेज के नीचे पांव फैलाये और पतलून के जेबों में दोनों हाथ डाले हुए, अकड़े बैठे थे और "मेनीला" चुरुट मुंह में दबाये फक फक धूंएं उड़ा रहे थे। यह देखतेही देखते मुझे नींद आने लगी। बांए ओर दरवाजे के पास ही मेरी कोच बिछी हुई थी। मेरी ही ओर उक्त पहरेदार साहब की पीठ पड़ती थी और मेरा नौकर, मैले चादरे में सिर पैर लपेटे हुआ, पड़ा गुर्राटे लेरहा था। अभी मुझे भरपूर नींद भी नहीं आई थी कि मुझे पासही किसीके रेंगने और घसकने की आहट मालूम दी। मैं हिला तो नहीं, पर आंखें खोलदीं, क्या देखता हूं कि एक काला हाथ जमीन पर से ऊपर को उठा और मेरेही पास एक टीन के बक्स पर जो कपड़ों की मेरी

गठरी रक्खी थी, उसे उसने उठाया । मैं जानताही था कि मेरे सब धुलेधुलाये कपड़े, जो मैं लखनऊ से साथ लाया था, उसी में बँधे थे । अब जो एकदम कूद कर उसे नहीं पकड़ता हूं, तो कपड़ों की गठरी से हाथ धो बैठता हूं । मैं उठकर उसका हाथ पकड़ाही चाहता था कि वह हाथ गठरी सहित गायब होगया। मेरी आहट पाकर हमारे गार्ड साहब ने चट मेज पर से तमंचा उठा लिया और यह समझ कर कि चोर अबतक नहीं भाग सका है, उन्होंने मेराही लक्ष किया, मैं घुटनों के बल कोच और खेमे के बीच में बैठा चोर को ढूंढ़ रहा था । यह सब एकही पल का काम था । हमारे गार्ड साहब पिस्तौल लिये हुए आगे बढ़े और मैंने चट खड़े होकर तलवार लेली । इतनेही में चोर राम सर्प के समान कोच के नीचे से निकल कर और पासही के दरवाजे से छलांग मार कर बाहर को भागे। मालूम होता है, इसी रास्ते से वह आया भी होगा ।

इतने में लोग जाग पड़े, पकड़ो, धरो, जाने न पावे का हुल्लड़ मचा और चोर की ढूंढ होने लगी। मैं ऊपर लिख आया हूं कि मेरी पालकी खेमे के अन्दर दरवाजे के पासही रक्खी हुई थी । उसका पट खुला हुआ था । चोर ने देखा कि पालकी का पट खुला है, उसीमें से होकर निकल जाना चाहिये, बस वह बन्दर के समान फुरती से लपक कर उसके अन्दर घुसा । हमारे गार्ड साहब ने एक काली मूर्ति को जो भागते और पालकी में घुसते देखा, बस उन्होंने उस पर पिस्तौल चलादी । मैंने भी घुसते हुए उसकी झलक मात्र देख ली थी, मैं भी तलवार लेकर उधरही लपक पड़ा । कहीं पालकी के अन्दर मेरा नौकर

पड़ा सो रहा था, जैसेही चोर उसपर गिरा कि वह चुहुंक कर चोर के साथ ही पालकी के बाहर कूदा और दोनों बाहर कीचड़ में गड्डमड्ड होकर गिरे और लोटने लगे। दोनों समझे कि पिस्तौल का निशाना उन्हींको लगा। चोर तो किसी प्रकार से सम्हल कर भाग खड़ा हुआ, परन्तु नौकर राम अबतक कादे में लत्थपत्थ पड़े हैं! चोर तो जान बचा कर डोली हुआ, पर मेरे साफ सुथरे कपड़ों की गठरी को एक गड़हे में मट्टी कीचड़ से सना छोड़ गया। मेरा एक कपड़ा भी कीचड़ से बेदाग न बचा।

जो लोग गर्म देश में कभी नहीं आये हैं, वे इसे एक साधारण घटना समझेंगे। यदि ऐसे देशों में उनको कभी सुथरे कपड़े बदलने का सुख, वा धुले कपड़े न रहने पर मैले कपड़े पहिनने का दुख, उठाना पड़ा है, तो वे समझ सकते हैं कि इस देश में, जहां "घर्ममिति" का पारा ८५° वा ९७° तक चढ़ा रहता है, जहां घने जङ्गलों के कारण से हवा रुकी रहती है, जहां मारे गरमी के अङ्ग से पसीने टपकते हैं, जहां भूमि तपने लगती है, जहां पेड़ों तक से हवाड़ निकला करती है, जहां हाथी, घोड़े, पशु, पंछी सभी पसीनों से शराबोर रहते हैं, मुझ पर यह कैसी मुसीबत पड़ी थी। जो जानते हैं वही मेरी इस अवस्था पर करुणा कर सकते हैं। मेरे बेयरा ने पहिले पहिल यह गठरी पाई। पहिले तो मैं उसपर बड़ा प्रसन्न हुआ कि उसने मेरी गठरी ढूंढ निकाली, परन्तु कपड़ों की दुर्दशा देखकर मुझे क्रोध आगया। जितने कपड़े थे सब कीचड़ मट्टी में सन कर पीले और भूरे होगए थे, एक भी बेदाग नहीं बचा था। चिकनी और लसदार महीन मट्टी उनके तह तह में समा गई थी। अब मैं मारे

गुस्से के एक२कपड़े उठाता और कपड़ों की दुर्गति देखकर एक एक करके अपने गार्ड साहब के सामने फेंकता जाता और उन्हें कोसता जाता था। सारा दोष मैंने उन्हींके माथे थोपा। वह हँस कर कहने लगे,"कि चोर भी बेदाग नहीं गया है, वह भी गोली खाके गया है।" यदि यह सत्य है, तो उन्होंने एक नाल में दो गोली भरी होंगी, क्योंकि सवेरे ही एक गोली पालकी के ढांचे में गहरी धसी हुई मिली। मुझसे न रहा गया और मैंने यह धसी हुई गोली उक्त साहब को देखा ही दिया। इनकी ढिटाई तो देखिये, अपनी डाढ़ी पर हाथ फेरते हुए, वे कहते क्या हैं कि यह चिन्ह तो बहुत दिन हुए उन्होंने देखा था और यह गोली तबही लगी थी, जब एक रात को मैंही उस में सो रहा था। परन्तु यह सब झूठ बात थी।

इसके बाद फिर रात भर कोई न सोया। देहातियों को भी बादशाह सलामत और उनके गारद के सिपाहियों के चले जाने का हाल मालूम होगया, जब उन्होंने देखा कि बादशाह चलदिए, तब वे लोग डेरों पर टूट पड़े। इस अंधेरी घुप्प रात में शाही डेरों के पास से स्त्रियों और मरदों की चीख पुकार, रात भर सुनाई देती रही। बेगमात की लौंडियां, जो साथ न जा सकी थीं, उनको इन दिहातियों के हाथ से नाना प्रकार के कष्ट सहने पड़े। खेमे फाड़े और लूटे गए, इन बिचारी स्त्रियों के गहने उतारे और छीने गए,सन्दूक तोड़े गए और बेगमात के कपड़े तक लूट लिए गए। हमलोग बैठे अपनी रक्षा कर रहे थे। यह नवाब-वज़ीर का काम था कि वह सारे लश्कर की रक्षा करते। हमको स्वयं अपनाही डर था कि कहीं हम पर भी दिहाती

लोग कृपा न करें। हमलोग हथियारबन्द, कोई पिस्तौल लिए हुए, कोई बन्दूक लेकर, कोई तलवार ही खेंचे हुए, मारने मरने पर लैस बैठे थे। इसमें सन्देह नहीं कि हमारे डेरों की ओर भी उन डाकुओं ने फेरे लगाए, पर हमें चौकस पाकर हमारी ओर आने का साहस उन्होंने न किया। इस वृत्तांत को पढ़-कर कदाचित कोई झुंझला के पूछे कि उन बिचारी स्त्रीयों की आपदा देख सुन कर भी हमलोग मसट्ट मारे क्यों बैठे रहै, उनकी सहायता को क्यों न गए ? इसका उत्तर हम यह देते हैं, कि ये स्त्रियां प्रायः नीच, डोमिनियां, रंडियां और लौंडियां थीं। यदि हम उनको बचाने जाते, तो लखनऊ पहुंच कर हम पर बड़े २ बान्धनू बांधे जाते। येही स्त्रियां, जिन्हें हम बचाने जाते, हम पर दूषण लगाने को तैय्यार होजातीं और हम पर हरम में घुस जाने का दोष लग जाता, फिर हमारा कहां पता लगता। इधर बादशाह का क्रोध, उधर रेजीडण्ट की असंतुष्टता, हमारी किसी बिधि जान न बचती। इसके साथही आगे की भलाई और आशा तो जाती ही रहती, हमारी कमाई और बटोरी चीजें भी राजदण्ड में हर लीजातीं, फिर हम कहीं के न रहजाते। दूसरी बात यह भी थी कि यदि हम जाते, तो हमारे डेरे को अकेला पाकर दिहाती कब छोड़ते, लूट न लेजाते? यह बात तो बनी बनाई है कि चाहे कोई कैसा ही शूर बीर क्यों न हो, पहले वह अपना बचाव कर लेता है, तब दूसरे की रक्षा करने जाता है। भला हम चार आदमियों से कम वहां जाही के क्या कर लेते और क्योंकर उन विपदग्रस्त स्त्रियों को बचा सकते थे। यदि हम जान पर खेल कर चले भी जाते, तो वे स्त्रियां ऐसी

न थीं, जो हमारे उपकार को मानतीं। यदि हम उनकी सहायता को चल देते, तो इधर हमारे कपड़े, माल असबाब, काठियां, कोच, पालकी, घोड़े इत्यादि की कौन रखवाली करता।

हमारे घोड़े हमारे खेमे के चारों ओर इस प्रकार बांध दिये गए थे, कि उन्हें कोई चुपचाप खोल कर ले ही नहीं जा सकता था, क्योंकि हमने घोड़ों की रस्सियों के दूसरे सिरे को, जिससे घोड़े खूटियों में बंधे थे, साईसों के हाथों में बंधवा दी थीं, जिससे घोड़ा खोलते ही उनके हाथों पर खिंचाव पड़ता और मालूम होजाता।

इस भारी भयानक और अंधेरी रात में हमलोग बैठे चुरुट पिया किये और चीकाधाड़, धरो पकड़ो की आवाज सुना किये, जब सूर्य उदय हुआ, तब हमलोग रात की घटना देखने खेमे से बाहर निकले, तो एक अद्भुत भयंकर दृश्य हमारे देखने में आया, जिसका वर्णन करना, वा ध्यान करना दुर्लभ है। बादशाह का एक खेमा गिरा पड़ा था। वे लखनऊ जाने के ऐसे धुन में थे कि उसको खड़ा कराने की उनको तनिक भी परवाह न हुई। हर एक आदमी जल्द चलने और असबाब बांध कर लैस होजाने की धुन में ऐसे लगे हुए थे कि इस गिरे हुए डेरे की ओर (लुटेरों को छोड़ कर) किसीने भी ध्यान न दिया। कूच क्या थी पूरी भगदड़ थी। यद्यपि नवाब ने बहुत कुछ पहरे बैठा दिये थे, तो भी डेरे खूब लूटे गए। माल असबाब का तो दिहातियों ने तहसनहस ही कर दिया, यहां तक कि बादशाह सलामत का कोट और पतलून को भी, जो वह उसी सांझ को पहिने हुए थे, न छोड़ा और उड़ा लेगए। डे

के चारों ओर की भूमि जगमगा रही थी, क्योंकि शाही बेगमात के चमकी और जरदोजी के कपड़े और साढ़ियां, जो हड़बड़ी में लुटेरों से गिर कर छूट गई थीं, इधर उधर छितरी पड़ी थीं। बहुत से अमूल्य वस्तुएं, वस्त्र, साढ़ियां, हाथी की झूलें, परदे और चांदी सोने के बरतन इत्यादि बिखरे पड़े थे। ये सब वस्तुएं देशी ही न थीं, इनमें हमको वे पोशाकें भी देखने में आईं, जो प्रायः हिन्दुस्तानी स्त्रियां कभी नहीं पहिनतीं, किन्तु यूरोपियन स्त्रियां ही पहिना करती हैं और विलायत के बड़ी२ दुकानों ही में देखने में आती हैं, जिन्हें देखकर कुंआरे युवक लोग दिल मसोस कर रहजाते हैं। हमलोगों को यह देखकर बड़ा आश्चर्य हुआ, क्योंकि हम खूब जानते थे कि बादशाह के अङ्गरेज़ नौकर—बावरची, कोचवान, राजनापित इत्यादि, जिनकी मेमें भी थीं, अपने बीबीयों को साथ यहां नहीं लाये हैं। इसलिये हमलोगों ने अनुमान किया कि हरम में अवश्य कोई ऐसी लेडी होगी, जो इन पोशाकों को पहिनती होगी, जिसके विषय में न हमें कुछ मालूम था और न हमने कभी कुछ सुनाही था।

यह भी मालूम हुआ कि लुटेरों और नवाब वजीर के आदमियों में घमासान लड़ाई भी हुई थी, क्योंकि एक जगह दो आदमियों की लाशें पड़ी हुई थीं, जिनके अङ्गभङ्ग, और लाश के टुकड़े२ होगए थे। देखने में ये दोनों लाशें बादशाही लशकर के आदमियों की नहीं जान पड़ती थीं। हमने यह भी सुना कि वजीर के भी बहुत से आदमी सख़्त घायल हुए हैं।

हमलोग अपने डेरे पर इसलिये शीघ्र लौट आये कि चलने के पहिले कुछ खापी लें। डेरे में पहुंचे तो क्या देखते हैं कि

११

वहां अंधेर मचा हुआ है, हुल्लड़ हो रहा है, और आदमियों में खूब गालीगलोज जूते पैजार हो रहे हैं। बड़ी कठिनता के साथ डांट डपट कर हमने उन्हें धीमा किया। गोलमाल और भीड़ ही देखकर हमें ज्ञात होगया था कि किसी बात पर हमारे और नवाब-वजीर के आदमियों में झगड़ा होगया है। यहां इतना दुन्द मचा हुआ था कि झगड़े का कारण समझ ही में नहीं आता था। यहां तक नौबत पहुंच गई थी कि दोनों ओर लाठी तनौवल तक होगई। यदि हम कुछ और देर करके आते, तो यहां सिरफुड़ौवल ही नहीं किन्तु पूरा युद्ध होजाता। पूछगीछ कीगई तो नवाब-वजीर के एक आदमी ने कहा कि "देखिये साहब, ये नालायक बदमाश, नवाब की आज्ञापालन नहीं करते"।

हमारे आदमियों ने कहा, "ये हरामजादे, कहते हैं कि अपने मालिक का कामकाज छोड़दो और हमारे साथ चलो।" संक्षेप यह कि दोनों दल के लोग चिल्ला २ कर अपनी २ राग गाने लगे। हिन्दुस्तानियों की बान है कि जब लड़ते हैं, तब खूब गला फाड़ २ कर बोलते हैं और एक दूसरे को धमकाते हैं।

इस लड़ाई में हमारा बहुत कुछ सम्बन्ध और स्वार्थ था। पूछगीछ से मालूम हुआ कि नवाब-वजीर ने आज्ञा दी है कि चलने के पहिले साहबलोगों के नौकरों से भी कूच के सामान कराने में सहायता लीजाय। इतनी आज्ञा पाकर नवाब के आदमी हमारे नौकरों को, जो उस वक्त कुछ काम नहीं करते थे, पकड़े लिये जाते थे। हमने सोचा कि यदि हम उन्हें भेज देते हैं, तो फिर हमलोग न मालूम कब चल सकेंगे। हमारे

असबाव कौन बांधेगा। मेरे समस्त वस्त्र तो कीचड़ में सन कर भ्रष्ट हो ही गए थे, इसलिये मैं चाहता था कि किसी प्रकार शीघ्र ही लखनऊ पहुंच जाऊं। मैंही अकेला उतावला न था, किन्तु जितने साहबलोग थे, सभी जल्द चल देना चाहते थे। लश्कर के बहुत से कहार तो बादशाह सलामत के ही सवारी के साथ साथ चल दिये थे, थोड़े से रह गए थे। जो कहीं नवाब-वजीर भी हमसे पहिले चल दें, तो हमारा लखनऊ पहुंचना बहुतही कठिन होजाता। इतनाही नहीं वरन् हमें यह भी डर था कि फिर हम लखनऊ पहुंच भी न सकेंगे, क्योंकि अवधवासी हम यूरोपियनलोगों से घृणा करते थे और बुरा मानते थे।

हमने बड़ी नम्रता के साथ धीरे से उन आदमियों से कहा कि देखो, जापनाह हमारी बाट जोहते होंगे, हमारे विना अकेले घबड़ावेंगे। वे चलती समय हमें जल्द आने की आज्ञा देगए हैं। पर ये नवाब वजीर के नौकर हमारी कब सुनते थे, वे कहने लगे, "आपलोगों के देर होने का उत्तर नवाब साहब देदेंगे।" हमने फिर कहा, "हमें उचित है कि हम शीघ्र ही चलदें, यदि हम अपने आदमियों को देदेंगे, तो हमारे असबाब कौन बांधेगा, हमें देर हो जायगी, और जापनाह की आज्ञा भङ्ग होगी।"

इसका उत्तर हमें यह मिला कि "बादशाह सलामत के पीछे नवाब-वजीर ही हाकिम और श्रेष्टाधिकारी हैं। उनका हुक्म आपलोगों को मानना होगा।"

तब हमने जरा कड़क कर कहा, "हमलोगों के पास कई जोड़ पिस्तौल की हैं, दो रैफल, बन्दूक और बहुतसी तलवारें

हैं, समझ रक्खो कि हम अपनी और अपने नौकरों की रक्षा भली भांति कर सकते हैं।" इसपर उन्होंने कहा, "आपके एक २ आदमी के लिये नवाब साहब के पास तीन तीन आदमी हैं और हथियारों की तो कुछ गिनतीही नहीं, यदि आप हट करेंगे, तो याद रखिये आप को एक आदमी भी न मिलेगा।"

नवाब के आदमियों की बातचीत सुनकर हमें विश्वास हो चला था कि नवाब जिस बात की दृढ़ प्रतिज्ञा कर लेंगे, उसे कर देखाएंगे। इनकी बातचीत में खुशामद की बात भी थी और दृढ़ता भी, हमारे आदमियों के लेजाने पर वे इतने दृढ़ हो रहे थे कि एक इंच भी नहीं टसकते थे।

हमलोग बड़े दुखी हुए, कुछ नहीं सूझता था कि अब क्या करें। हमारी बुरी दशा थी, हम नवाब-वजीर से बिगाड़ना भी नहीं चाहते थे। हमलोग उन्हें समझाही रहे थे कि हमें राज-नापित का ध्यान आया। इस का इतना प्रताप दरबार में था कि क्या बड़े क्या छोटे, सभी इससे कांपते थे। एक कहावत है– "जेकर जापर सत्य सनेहू। ते तेहि मिले न कछु संदेहु" अर्थात् जिसका ध्यान करो वह मिलही जाता है। हमलोग उसे यादही कर रहे थे कि इतनेमें वह आन बिराजा। वह भी जल्द कूच करने की सोच में था और उसकी इच्छा थी कि हमलोग उसके साथ ही चलें और शीघ्र लखनऊ पहुंच जायं। हमलोगों ने सारा वृत्तांत उसे सुनया। यह छोटे कद का आदमी मारे क्रोध के फूल कर कुप्पा होगया! पहिले तो नवाब के आदमी से अङ्गरेजी में कहा कि 'तुम सब पाजी बदमाश हो। नवाब और उसके साथी भी दुष्ट और नीच हैं'। फिर टूटी फूटी हिन्दी में बोला कि 'जाओ नवाब

साहब से कहदो कि मुझे जल्द जाकर जापनाह का बाल संवारना है। मैं अभी लखनऊ जाना चाहता हूं, जरा भी देर नहीं कर सकता और ये साहब लोग भी मेरेही साथ जायंगे, इसलिये कोई नौकर यहां का न पकड़ा जाय। क्या बिगारियों की कमी है ?

इसके उत्तर में नवाब-वजीर के आदमियों ने चूं तक न की, झुक कर सलाम किया और अपना मुंह लेकर चलते बने। सच है, 'जबरदस्त का ठेंगा सिर पर'। राजनापित की शरन लेने में हमें कुछ दुख न हुआ। हमलोग का काम निकला और राजनापित भी तुष्ट होगया। यदि नवाब-वजीर जी में कुढ़े हों तो कुढ़ें। यह हम नहीं कह सकते कि उन्होंने बुरा माना वा नहीं—भला वे अपनी हेटी हमपर क्यों प्रगट होने देते। इसका फल यह हुआ कि फिर हमारे नौकरों की मांग नहीं हुई।

जब हमलोग लखनऊ पहुंचे,तो मालूम हुआ कि बादशाह सलामत "दिलकुशा" बाग में, जहां से हम शिकार में गए थे, ठहरे हुए हमारी बाट जोह रहे हैं।

दूसरे दिन सवेरे जब हमलोग उनकी सेवा में उपस्थित हुए, तब हमने देखा कि राजनापित उनका बाल संवार रहा था। हमें देखकर बादशाह सलामत बोले कि "वाह! साहबो इस सुनसान स्थान में तुमलोगों ने हमें अच्छा अकेला छोड़ दिया था। हममें से एक ने निवेदन किया कि "जहांपनाह तो साधारण मनुष्य की अपेक्षा बड़ी फुरती और बेग के साथ कूच करदेते हैं।"

बादशाह। "खैर, मुझे हर्ष है कि तुम लोग कुशलक्षेमपूर्वक आ तो गए। मैंने उन हरामी के बच्चे राजद्रोही दिहातियों के

लूट मार का सम्वाद सुना है। खां ने सारा वृत्तान्त कहा है,जरा तुमलोग भी पूरा पूरा हाल फिर बयान करो।"

जोकुछ हमने देखा था रत्ती रत्ती कह सुनाया। यह सुनकर बादशाह सलामत आग बगूला होगए और क्रोध में हिकला हिकला कर कहने लगे, "दे......देखो तो इन ह......हरामियों ने मेरी बे......बेगमात की और मेरी पोशाकों को कोढ़ियल हाथों से त......तहसनहस करने का साहस किया है। अब्बा जान के सिर की कसम, मैं उनका मटियामेट करा दूंगा।"

राजनापित। हजूर, मैंने सुना है कि नवाब-वजीर के आदमियों ने उनके मुखियाओं को पकड़ लिया है और दण्ड दिलाने के लिये साथ २ पीछे लिये आते हैं।

बादशाह। "सुनो खां, उनमें से एक एक को प्राणदण्ड दिया जायगा। चाहे वेलोग सौ से भी अधिक हों,सब की जान लूंगा। जगत में कौन ऐसा है जो अब उन्हें बचा सकेगा।"

उक्त लुटेरे दुर्दशा के साथ जब दरबार में लाए गए, तब हमने उन्हे देखा, वास्तव में उनके स्वरूप बड़े भयङ्कर और डरावने थे। सचमुच वे ऐसेही थे कि उनकी गरदन उड़ा दी जाय। प्रत्येक लुटेरा चारपाई पर सुलाकर ऐसा बंधा पड़ा था, जैसा कि लंडन में शराबीयों को पुलिसवाले चारपाई पर बांध कर उठाले जाते हैं। सभी के अंगों पर तलवार वा छुरी के घाव लगे हुए थे, इन पर मलहम पट्टी नहीं की गई थी, ये लोग बारह आदमी थे। उनको प्राणदण्ड की आज्ञा दीगई और उसी दिन उनके सिर काट डाले गए। मैं यह नहीं कह सकता कि ये लोग मुखिया थे वा नहीं। नवाब-वजीर तो

इन्हीं को मुखिया बताते थे। कोई आश्चर्य की बात नहीं है कि नवाब के आदमियों ने अपने सिर की बला टालने के लिए कुछ निरपराधी देहातियों को पकड़ लिया हो और अपनी कार्रवाई देखाने के लिए उनको दण्ड दिलादिया हो। हिन्दुस्तानी रियास्तों में बहुधा ऐसा हुआ करता है। क्योंकि इन देशी रियास्तों में कोई ऐसी वारदात नहीं होती, जिनमें पुलिस कुछ न कुछ निरपराधियों को पकड़ कर दण्ड न दिलाती हो और उन्हें अपराधी पूरी तरह से न साबित करा देती हो।

अवध के दरबार में सरसरी तौर से मुकदमे फैसला होते हैं। लखनऊ छोड़ कर कहीं जेलखाना तक नहीं है। लखनऊ से बाहर यदि कोई चोरी में पकड़ा जाता और उसपर अपराध निश्चय रूप से साबित होजाता, किंवा उसके विरुध लोग बड़ी २ शपथ उठाते, तो वह फौरन काट डाला जाता था। यूरोप देश के अदालतों के समान मुकद्दमे की छान पछोड़ करने की फुरसत ही चकलेदारों को न मिलती थी। मेरा तो यह विश्वास है कि 'कम्पनी बहादुर' के कानून किसी देश में चाहे कैसेही अनुपयोगी हों, परन्तु अवधवासियों के लिये तो चकलेदारों की अपेक्षा 'कम्पनी बहादुर' का एक मजिष्ट्रेट सहस्त्रगुण अच्छा न्याय करेगा, चाहे वह उनकी बोलचाल वा उनकी भाषा से कितना ही अपरिचित क्यों न हो॥

पांचवां अध्याय।

बादशाह की उदारता।

जिस देश के ऐसे बादशाह हों और जहां की प्रजा ऐसी राजभक्त और आज्ञाकारी हो, जैसी कि हिन्दुस्तान की है, तो वहां के मुंहलगे दरबारियों के अंधाधुन्ध का क्या पूछना है। अवध के दरबार में इस राजनापित का इतना प्रभावशाली और प्रतापवान होना निस्सन्देह एक विचित्र बात थी, क्योंकि न यह नापित साहब देश-भाषा ही भली भांति जानते थे और न बादशाह सलामत ही इतनी अंगरेजी जानते थे कि अपना अभिप्राय पूरी तरह से अंगरेजी में प्रगट कर सकते।

मैं ऊपर लिखही चुका हूं कि इस नापित साहब का बड़ा मान, और सत्कार लखनऊ में था। और विलायत की सब वस्तुएं इसी के द्वारा मंगाई वा ली जाती थीं। इसके अतिरिक्त 'पश्वालय' का भी वही अफसर था। मेरे सामने एकही बेर वह मासिक खर्च का चिट्ठा बादशाह की दस्तखत के लिए लाया था और उसी बेर मैंने मासिक व्यय के चिट्ठे की लम्बाई देखी थी।

दोपहर के खाने के उपरान्त जब हमलोग महल में बैठे थे, उस समय बादशाह का उक्त प्रियपात्र हाथ में कागज का एक पुलिन्दा लिए हुए आया। हिन्दुस्तान में यह रीति है कि वहां के लोग बही खाते वा मुकद्मों की मिसिल पुस्तकाकार नहीं रखते, किन्तु एक बड़े लम्बे कागज को लपेट कर पुलिन्दा बनाकर लिखते हैं, ज्यों ज्यों यह समाप्त होता जाता है, त्यों त्यों उसी के अन्त में दूसरा कागज जोड़ते जाते हैं।

और बादशाह से दो चार बातें कर लेता। हमलोगों का नियम था कि जब हम बादशाह से कुछ निवेदन करते, तब टोपी उतार लेते थे। जिस वक्त की बात को हम वर्णन करना चाहते हैं, उस समय मास्टरजी, गाड़ी के बराबर घोड़ा दौड़ाते बादशाह से बातचीत करते, चले जा रहे थे। इतने में सड़क के एक किनारे से एक लम्बे कद का हट्टा कट्टा आदमी सामने आके उचक २ कर नाचने और गाने लगा। बादशाह सलामत उसके जङ्गली-पन को देखने लगे। एक दो सवार आकर उसे हटाने लगे, परंतु बादशाह ने उन्हें रोक दिया और गाड़ी ठहरवा कर वे उसका गाना सुनने लगे। इस समय यही तरङ्ग आगई थी, नहीं तो अन्य अवसर पर सवारों की मार धाड़ देखकर वे हँसने लगते।

इस जङ्गली आदमी का नाम 'पीरू' था, जिसपर बादशाह सलामत की इतनी कृपादृष्टि होगई। वह थिरक २ कर नाच रहा था और अपनाही बनाया गीत गा रहा था, जिसमें कुछ पद बादशाह की प्रशंसा के थे। सारा रिसाला खड़ा था। बादशाह ने ठहर कर उसका सारा गीत सुना और वे बड़े प्रसन्न हुए। उन्होंने चोबदार को आज्ञा दी कि ५ मोहरें उसे दीजायँ।

चलती समय कहते गए कि "तुम्हारा गाना कल महल में फिर भी सुनेंगे।" पीरू ने निवेदन किया कि जहांपनाह की कृपादृष्टि गुलाम पर वैसीही बनी रहे, जैसे कि खजूर के पेड़ पर सूर्य्य की किरणें पड़ती हैं।

'पीरू' भी अपने तरङ्ग का एक निराला कवि था। पुराने कवियों के विरुद्ध यह मुंहफट और निर्लज था। दूसरे दिन यह दरबार में आया और एक नया पद गाने लगा, परन्तु बादशाह

ने वही गीत गाने को कहा (जो उसने पहिले दिन गाया था)। अब तो वह रोज दरबार में हाजिर होता और वही अलाप अलापता। बादशाह भी रोज उसका गाना सुनते और प्रसन्न होते। अब तो इनाम की उसपर भरमार होने लगी और अब यह भी लखनऊ के बढ़ेचढ़े लोगों में गिना जाने लगा। एक महीना भी पूरा नहीं हुआ था कि बादशाह की उसपर विशेष कृपा देखकर, नवाब-वजीर ने भी उसे कुछ पारितोषिक दिया, उनके देखा देखी, कमानियर साहब राजा बखतावरसिंह अफसर पुलिस ने भी दिया। अब क्या था चारों ओर से 'पीरू' पर हुन बरसने लगा। यही जान पड़ता था कि एक न एक दिन यह भी लखनऊ के उमराओं के बराबर होजायगा, इसलिये लोग झुक झुक कर उसको सलाम करने लगे। पाठक लोग सोचते होंगे कि इसकी यह अवस्था थोड़ेही दिन रही होगी, पर यह बात न थी। उसकी यह उत्तम दशा बहुत दिनों तक ऐसीही बढ़ी चढ़ी रही। पीरू के लिये महल में कमरे भी बनवा दिये गए। पहिले जिसके तन पर साबित लत्ता तक न था, अब वह साटन और तनजेब पहिनने लगा। नवाब-वजीर, कमानियर साहब और राजा बखतावरसिंह जो दरबार की नाक थे, उसको बराबर का सम्मान देकर मिलते और बातचीत करते थे और पीरू भी भड़कीले और उत्तम वस्त्र धारण करने लगा। भला ऐसा कवि कभी और भी हुआ है, जिसका इतना सम्मान हुआ हो।

कुछ दिनों तो पीरू का गाना रोज होता था, फिर सातवें आठवें दिन होने लगा, तदुपरान्त महीनवें दिन और फिर कभी कदास वह दरबार में गाता था, तौ भी बादशाह की कृपा

दृष्टि उसपर वैसीही बनी रही। उस दिन से, जबकि वह सड़क के किनारे से निकल कर जङ्गलियों के सदृश बादशाह के सामने आकर नाचा और सवार लोग उसे जानवर की तरह हटाने के लिये टूट पडे थे, लगभग अठारह महीने तक, अर्थात् जब तक मैं लखनऊ में रहा, पीरू उसी प्रकार लखनऊ के उमरा में गिना जाता रहा। इस समय मुझे याद नहीं आता कि उसे क्या खिताब मिला था, परन्तु इतना याद आता है कि उसके नाम के आगे 'सिंह' का खिताब तो अवश्य था। पीछे 'राजा' का खिताब भी मिल गया था, क्योंकि पीरू जात का हिन्दू था। हिन्दुस्थानी रियासतों में 'राजा' और 'सिंह' हिन्दुओं को खिताब मिलता है और 'नवाब' और 'अमीर' मुसल्मानों को।

बादशाह सलामत की कृपा दृष्टि की लहर का वर्णन जो ऊपर किया गया है, उसीके साथ मैं अपने एक मित्र का भी वर्णन कर देना उचित समझता हूं, जो कलकत्ते से मेरे पास लखनऊ आये थे और अब वह मिडलसेक्स के शरीफ हैं, क्योंकि उनपर बादशाह सलामत की विशेष कृपा होगई थी।

मुझे लखनऊ में आये कुछही महीने हुए थे कि मेरे उक्त मित्र ने इलाहाबाद से एक पत्र मुझेलिखा कि अब मैं इङ्गलिस्तान जाने वाला हूं, इसलिये इच्छा है कि इन देशों की सैर करता जाऊं। उनका तात्पर्य्य यह था कि यदि वह लखनऊ आवें, तो क्या उन्हें जानवरों की लड़ाई, लखनऊ का राजदरबार, अथवा लखनऊ की उन चीजों के देखने का अवसर मिलेगा, जो अनूठी और देखने योग्य हैं।

यह मेरे बहुत बड़े मित्र थे, इन्होंने कलकत्ते में रहकर

व्यापार में बहुत कुछ धन उपार्जन कर लिया था। मैं भी इन्हें अपनी मैत्री दिखाना चाहता था, क्योंकि जगत में सनातन से यहप्रथा चली आई है कि धनवान की शुश्रुषा और उनके प्रसन्न करने की लालसा सबको होती है। मैंने उनको लिखा कि आप खुशी से आवें। शाही शेर, पश्वालय इत्यादि की सैर करा दूंगा, इससे अधिक का बचन नहीं देता। यह लिख कर पत्र तो मैंने उन्हें भेज दिया, अब उनको उक्त चीजें दिखाने की तजवीज सोचने लगा। एक दिन अपने उन मित्रवर्गों से जिनका दरबार से सम्बन्ध था, इसके विषय में सलाह पूछी, उन्होंने कहा कि यदि राजनापित चाहे तो जानवरों की लड़ाई वा कम से कम हाथियों की लड़ाई की आज्ञा बादशाह से सहजही में ले सकता है। उद्योग करना चाहिये, इसमें कोई हानि नहीं है।

विदित रहे कि राजनापित के घर पर बादशाह सलामत ने हमलोगों के जी बहलाव के लिए एक बिलियर्ड-ठेबुल (अंटा) रखवा दिया था, वहां हमलोग प्रायः खेलने जाया करते थे। नित्य दोपहर के समय दो एक व्यक्ति वहां बैठेही रहते थे। जब मैं वहां गया, तो देखा कि कप्तान साहब के साथ राजनापित अण्टा खेल रहा है।

मैंने उससे कहा कि "मेरे एक परम मित्र इलाहाबाह से लखनऊ की सैर करने आते हैं। मैं समझता हूं कि पश्वागार देखने की आज्ञा तो उन्हें मिलही जायगी।"

राजनापित। "हां, हां, मैं एक चोबदार साथ कर दूंगा, वह सब दिखला लावेगा।"

पश्वागार और बाग इत्यादि का राजनापित ही मनेजर था,

इसलिये उसके चोबदार के साथ रहने से सब चीजें देखने में आ-जातीं। खेल बराबर हो रहा था और मैं भी खड़ा देख रहा था। बीच में छेड़ कर फिर मैंने पूछा कि "हाथियों की लड़ाई देखने का अवसर तो कदाचित न मिलेगा?"

राजनापित। (कप्तान साहब से) 'वाह जी, क्यानन और पाकेट* दोनों जीते, खूब।' (फिर मुझसे उसने कहा) "मैं तो समझता हूं कि इन दिनों कोई हाथी मस्त नहीं है।" फिर कुछ देर सोच कर, 'तुम्हारे मित्र कौन हैं, क्या वह व्यापारी हैं? क्या मेरे लिये वह कुछ कम्पनी के कागज (नोट) खरीद देंगी?

मैं। "वह बड़े भारी व्यापारी हैं। कलकत्ते में उनकी बड़ी भारी कोठी है, तुमने आर० बी० कम्पनी के मालिक मिस्टर आर० का नाम सुना होगा। वे बड़े धनवान हैं। मुझे विश्वास है कि मेरे अनुरोध से वे आपका काम कर देंगे"।

नापित। 'बस ठीक है। मैं जानवरों की लड़ाई का ठीक ठाक कर दूंगा। यदि कोई मस्त हाथी न होगा न सही, शेर वा गैंडे तो हैं। अच्छा तुम मेरी ओर से गिनते जाना। अरे, फिर लाल गेंद को मार दिया, कप्तान साहब! बाजी तो हरगई। अच्छा ५० रूपये का मैं देनदार रहा।"

इसके बाद मैं खुशी खुशी घर चला आया। दूसरे दिन मेरे मित्र आगए। इसलिये जानवरों की लड़ाई के बारे में सुन गुन लेने मैं दरबार में गया। वहां क्या देखता हूं कि नापित बैठा बादशाह का बाल संवार रहा है और कुछ बातें भी करता जाता है। इधर उधर की बातें करके नापित बोल उठा।

---

* विलियर्ड के खेल में बाजी विशेष का नाम।

"बहुत दिनों से जापनाह ने जानवरों की लड़ाई नहीं देखी।"

बादशाह। "अजी! देखते २ जी उक्ता गया। देखने को जी ही नहीं करता। मेरी समझ में तो आजकल कोई हाथी भी मस्त न होगा"।

नापित।"ग़रीब परवर! आजही सवेरे मुझे खबर मिली है कि दो तीन हाथी मस्त होगए हैं"।

बादशाह। 'क्या तुम हाथियों की लड़ाई देखा चाहते हो?'

नापित। "जैसी श्रीमान की इच्छा। आजकल कलकत्ते के एक बड़े धनी महाजन और व्योपारी मि० आर० यहां आए हुए हैं,वह दिल्ली और आगरे की भी सैर करेंगे, मैं चाहता हूं कि वह लखनऊ की ऐसी महिमा देखते जायं, जो उनके चित्त में सदा जाग्रत रहे"।

बादशाह। "अवश्य अवश्य, मेरी समझ में तो कलकत्ते और इङ्गलिस्तान के बहुत से काम तुम उनसे निकाल सकते हो, क्यों खां"?

नापित। "हजूर की भी क्या बात है-इधर तांत बाजी, उधर राग बूझा"।

अब यह निश्चय होगया कि कल ९ बजे सवेरे ही चांदगंज के मैदान में जानवरों की लड़ाई होगी। मैं तो अपने मित्र को यह सुसंवाद सुनाने के लिए घर लौट गया। मैंने उनसे कहा कि 'आप राजनापित से जरा शिष्टाचार से मिलियेगा, क्योंकि उन्ही ने उद्योग करके आपके लिए यह काम किया है'। उन्होंने कहा, "भला कौन ऐसा है जो उनसे आदर पूर्वक न मिलेगा? एक तो वह बादशाह सलामत के नाक के बाल हैं और दूसरे

फिर रईस हैं। फिर मैं क्यों न नम्रता पूर्वक उनसे मिलूंगा" मिस्टर आर० मे स्वाभाविक ही ऐसे गुण वर्त्तमान थे, जो एक राज्यसभासद् में होने चाहिएं।

ठीक समय पर चोबदार आगया और हमलोग लखनऊ के महलात को देखने के लिए चलपड़े। इनके विषय में आगे चलकर कुछ लिखा जायगा और शेरों, चीतों का तो बहुत कुछ वृत्तान्त आगे आवेगा, इसलिए इनका विषय छेड़ कर इस कथा को बीच में नहीं काटा चाहता। इस चोबदार के साथ रहने से कहीं भी रोक टोक न हुई, उसके हाथ में बल्लम क्या था, मानो जादू की छड़ी थी, जिसके सामने सब फाटक खुलते चले जाते थे, महल, दफ़तर, पस्त्रागार, तोपखाना, मेघजीन, इमामबाड़ा (जिसे बिशप पादड़ी हेवर साहबने मुसलमानो का देवालय लिखा है), मसजिदें, मारटीन साहब की कोठी, सभी जगह हमलोग बे रोक टोक चले जाते थे।

दूसरे दिन सवेरे ही हमलोग चांदगञ्ज हाथियों की लड़ाई देखने चलदिए। यह स्थान गोमती पार लखनऊ से तीन मील दूरी पर है, वहां एक छोटी सी दो मंजली कोठी बनी हुई है, जिसके चारों ओर ऊंची दीवारें घिरी हुई है। वहां पहुंच कर मैंने अपने मित्र को नीचेही एक दूसरे चोबदार के साथ कर दिया, जिसमें वह उसके साथ नीचेही बैठकर अच्छी तरह से तमाशा देखें। मैं उनके साथ नहीं ठहर सकता था, क्योंकि मुझे ऊपर की कोठी में जाना आवश्यक था, जहां कि बादशाह सलामत बिराजमान होने वाले थे।

बादशाह की सवारी के डंके की आवाज सुनकर मैंने अपने

मित्र को नीचेही छोड़ दिया और ऊपर चलागया! (बादशाह अथवा बादशाह-बेगम के सिवाय और किसी के सवारी में डंका नहीं बजता, अवध में यही बादशाही निशान माना जाता था)।

इतने में बादशाह सलामत भी पधारे और उनके लिये जो मसनद गद्दी वहां लगी थी उसपर बैठ गए और मोरछल करने वालियां नियमानुसार कतार से पीछे खड़ी होगईं। हमलोग खड़े थे, कोई तो कटहरे के सहारे और कोई बादशाही तख़्त पर हाथ धरे।

बादशाह ने पूछा, "क्या कलकत्ते वाले मिस्टर आर० तुम्हारे ही यहां ठहरे हैं।"

मैं। "जी हां, जापनाह।"

बादशाह। "फिर वह कहां है?"

मैं। "श्रीमान! नीचे ऐसी जगह बैठे हैं, जहां से वे तमाशा अच्छी तरह देख सकते हैं।"

बादशाह। "तुम उन्हें यहां क्यों न लेआये।"

मैं। "मैं नहीं जानता था कि उन्हें यहां लाने की आज्ञा है।"

बादशाह। "वाह वाह, भली कही, जाओ जाओ, उन्हें यहीं लेआओ। वहां से भला क्या दिखाई देगा।"

यदि मैं उन्हें बिना आज्ञा वहां लेगया होता, तो वह अवश्य वहां से हटा दिए जाते। राजाज्ञा पाकर मैं शीघ्रही उन्हें लाने को चला गया और जाकर मैंने उनसे कहा, "बादशाह सलामत ने तूम्हें ऊपर बुलाया है।"

मित्र। "बादशाह के इस अनुग्रह का मैं बहुत२ धन्यवाद

देता हूं। मैं यहीं रहना अच्छा समझता हूँ"।

मैं। "नहीं नहीं, तुम्हें अवश्य चलना होगा। नहीं तो अपमान समझा जायगा"।

मित्र। "बहुत लोग ऐसे भी भाग्यशाली होते हैं, जिनको सत्कार बेमांगेही मिलता है।" यह कहते हुए वह जल्दी २ सीढ़ियां चढ़ने लगा।

मैं। "ठहरो २, इतना उतावलापन क्यों करते हो। बादशाह के सामने खाली हाथ नहीं जाना चाहिये। भेंट देने को कुछ मोहरें तो लेलो"।

मित्र। "मैं भेंटवेंट न दूंगा। क्या! बादशाह के दर्शनमात्र ही के लिये मैं अपनी मोहर गवाऊं। क्या खूब, यह तो मुझ से न होगा"।

मैंने उन्हें समझाया कि यह केवल दरबार के नियम मात्र हैं। बादशाह सलामत केवल उस पर हाथ लगा देंगे, फिर तुम अपनी मोहरें अपने जेब में रख लेना। मैंने झट पट कहीं से अशर्फियां उधार मँगा कर उन्हें दीं। तब मेरे मित्र हाथ पर सफेद रूमाल और उस पर मोहरें रक्खे हुए बादशाह के सामने आये और निकट जाकर भेंट लिये खड़े रहे। बादशाह सलामत थोड़ी देर तो उन्हें खूब निरख २ कर देखते रहे, फिर उन्होंने अपना हाथ नीचे रखकर दूसरे हाथ की उँगलियों से अशर्फियों को स्पर्श कर लिया। यह तो उनके (मेरे मित्र) लिये बड़े सम्मान की बात थी और उन्हें इसपर प्रसन्न होकर गौरव करना चाहिये था, पर वह तो बौखला से गए। इसका कारण उन्होंने पीछे मुझ से कहा, कि जब बादशाह ने मोहरों की ओर हाथ बढ़ाया, तब

मैं समझा कि बादशाह मोहरें ले लेना चाहते हैं। मैं इस डर से कि कहीं वे अशर्फियां ले न लें, मुठी बन्द करनेही को था, * कि इतने ही में उन्होंने अपना हाथ खींच लिया और जब मैंने अशर्फियां अपने जेब में डाल लीं, तब जाकर चित्त सावधान हुआ, क्योंकि हिन्दुस्तानियों का क्या विश्वास'।

इशारा किया गया और हाथी एक दूसरे पर टूट पड़े। यह एक साधारण लड़ाई थी, इस लड़ाई में कोई विशेषता न थी। सारांश यह कि एक हाथी ने दूसरे को हरा कर भगा दिया। मेरे मित्र बड़े अचम्भे के साथ देख रहे थे और खुश हो रहे थे। बादशाह भी उनके चमत्कृत्य होने से प्रसन्नबदन थे। लड़ाई समाप्त होने से पहिलेही बादशाह सलामत उन पर ऐसे मोहित होगए थे कि उनको अपने बगल में मसनद पर बैठने को कहा। परन्तु मिस्टर आर० हम सब लोगों को खड़ा देखकर कुछ हिचकिचाये और बैठ जाना अनुचित जान कर बोले कि "मैं आनन्द से खड़ा हूं"। भला इससे बढ़ कर उजड्डपन और क्या हो सकता है! बादशाह तो उनका सम्मान कर रहे हैं और वे आज्ञापालन नहीं करते। कोई दूसरा अवसर होता तो बादशाह को क्रोध आजाता और उसी दम उन्हें गरदनियां दिलवा कर निकलवा देते। पर कुशल यह हुई कि इस समय बादशाह आमोद में थे, उनके इस गवांरपन और बेतुकेपन पर वे हँस पड़े और बैठने के लिये उन्होंने फिर कहा। बादशाह

* आखिर जङ्गली और घामड़पन कहां जाय। समझा देने पर भी दो चार मोहरों की इतनी लालच सच है, "सिखाई बुद्धि उपजाई आया कहीं ठहर सकती है"। उदारता हिन्दुस्तानियोंही के हिस्से में है।

के कुअवसर हँसने से वह समझ गए कि कोई अनुचित बात उन्होंने की है, इसलिये घबरा कर उन्होंने मेरी ओर देखा। मैंने इशारा किया कि बैठ जाओ। तब वह सिंहासन की कगर पर बैठ गए। कगर पर बैठने से उन्हें कष्ट हो रहा था। अब चँवर-वालियां बादशाह और उनके पाहुन दोनों पर मोरछल करने लगीं। दरबार का यही नियम था।

निदान लड़ाई समाप्त हुई और लोग अपने २ हाथियों के पास चले गए। मैं बादशाह के साथ उनके पीछे २ उनको गाड़ी पर सवार कराने गया। गाड़ी पर चढ़ती समय बादशाह ने मुझसे कहा कि "आज मैं अकेले ही खाना खाऊंगा, तुम अपने मित्र को साथ लेकर आना।"

जब मैं और मिस्टर आर० हाथी पर चढ़ चुके, तब मैंने अपने मित्र से कहा कि "मित्र तुम बड़े भाग्यवान हो। आज तुमको बादशाह सलामत के साथ भोजन करने का सौभाग्य प्राप्त होगा।"

मित्र। "यह तो बुरी सुनाई। इससे तो मैं अकेलेही वा तुम्हारे साथ भोजन करना भला समझता हूं।"

मैं। "ऐसा नहीं हो सकता। तुम पर तो बादशाह की कृपा दृष्टि है। तुमको तो अपना भाग्य सराहना चाहिये। अपने पास बैठला कर उन्होंने तुम्हारा बड़ाही सत्कार किया और तुम ऐसा कहते हो"।

मित्र। "मैं ऐसी इज़्ज़त से बाज आया। सत्कार-पूर्वक उस मसनद के बाढ़दार कगर पर बैठने से खड़े रहना हजार गुना सुखदायक है।"

प्रत्यक्ष में यद्यपि वह नाहीं नुकर करते थे, परन्तु चित्त में बड़े गदगद हो रहे थे कि बादशाह की उनपर विशेष कृपादृष्टि है। 'मन भावे मुड़िया हिलावे' का मामला था। सारांश यह कि उन्होंने बादशाह का निमँत्रण शीघ्रही मान लिया। मालूम देता था कि उनको विश्वास होता जाता है कि व्यापारी बनने की अपेक्षा दरबारी बन कर रहना, उनकी सहजात इच्छा है, इसलिये निमंत्रण में खूबही बन ठन कर गए।

जब हमलोग बादशाह के पीछे २ खाने के कमरे में गए, तब उन्होंने अपने नए मित्र को अपने बगल में बैठने की जगह देनी चाही और मास्टरजी से कहा कि आप मिस्टर आर० को मेरे पासही बैठने की जगह कर दें। उनके लिये कुरसी बिछा दीगई। यह उनका और भी सम्मान किया गया। और वह कुरसी पर बादशाह के बगल में इस प्रकार से बैठे, मानो उनका सारा जीवन बादशाहों के साथ ही बैठने में व्यतीत हुआ है। अब तो उनका इतना जी खुल गया था कि जो जो सत्कार उनका किया गया, उसे वह बड़े हर्ष और धैर्य्य पूर्वक स्वीकार करने लगे।

अब शराब की बोतलें खुलने लगीं। बादशाह का चित्त खिलने और आनन्द में आने लगा। तब वे अपने नए मित्र से बोले, "मेरे एक बड़े जिगरी दोस्त आजकल लण्डन में हैं, तुम वहीं जाते हो न?"

विदित रहे कि यह 'जिगरी दोस्त' एक अङ्गरेज थे, जो पहिले अवध में रेजिडंट रह चुके थे और बादशाह से उनकी गहरी मित्रता होगई थी। उनका जो नाम हो, पर मैं उनको

स्मिथ करके लिखता हूं। स्मिथ साहब की मेम बड़ी सुन्दरी थी। सुनने में आता है कि बादशाह सलामत की उक्त मेम से बड़ी प्रीति थी। मेरे लखनऊमें आने से पहिले की यह बात है। अतएव जो कुछ कि लोगों से सुना है वही लिख रहा हूं। लोगों में यह भी प्रसिद्ध है कि मि० स्मिथ जब लखनऊ से गए, तब उनके पास पछत्तर लाख रुपये (अर्थात ७५०००० पाउण्ड) थे। इन रुपयों से उन्होंने इतने कम्पनी के कागज खरीदे कि अन्त में कम्पनी की ओर से इस बात की पूछ गीछ हुई और बङ्गाल की गवर्मेण्ट ने इसका अनुसन्धान गुप्त रीति से किया, जिसका फल यह हुआ कि मि० स्मिथ इस्तेफा देकर लण्डन चल दिये।

बादशाह ने फिर कहा, 'मेरे एक परम मित्र इङ्गलिस्तान में इन दिनों बिराजमान हैं। तुम भी वहीं जाते हो न'। कुछ तो मानसिक प्रेमभाव और कुछ मद्यपान के कारण से बादशाह की आवाज प्रेम रस से भरी हुई थी।

मि० आर०। 'वह कौन साहब हैं जिनको श्रीमान के कृपा पात्र होने का सौभाग्य प्राप्त है।'

बादशाह। 'वाह वाह, अजी वही मिस्टर स्मिथ, जो पहिले यहां रेजीडंट रह चुके हैं।'

मि० आर०। 'मि० स्मिथ, मि० स्मिथ। मैं उन्हें खूब जानता हूं, उनका एजंट भी रह चुका हूं'।

बादशाह। 'ठीक वही, तुमने खूब पहिचाना। मित्र क्या तुम कहते हो कि तुम उनको भलीभांति जानते हो? मुझे उनके साथ बड़ा प्रेम था, अब क्या है। बाप रे बाप, मेरा जी उमडा आता है, मन करता है खूब रोऊं। हां साहबो, गिलास भर लो

और स्मिथ साहब के क्षेम कुशल का प्याला पीओ'।

हम सब लोग गट गट करके पी गए।

बादशाह। 'जण्टिलमैन, (फिर प्याला भर कर) अबकी दो दो प्याले मिसेस स्मिथ के लिये पीजिये'।

अब की लोगों ने दो २ प्याले पीए। बादशाह नशे में चूर होने लगे और मनोव्याकुलता के कारण विह्वल होगए।

बादशाह। "इङ्गलिस्तान जाकर क्या तुम स्मिथ साहब से भी मिलोगे?"

मि॰ आर॰। "मैं अवश्य उनसे मिलूंगा। क्योंकि मुझको भी उनसे एक काम है।"

तब बादशाह ने अपनी बड़ी सुन्दर रत्न-जटित जेबीघड़ी (जिसका दाम १५००० फ्रांक है) चेन समेत अपने गले से उतार कर मि॰ आर॰ के गले में पहिना दिया और हिकला हिकला के कहने लगे, "कि तुम मुझे धर्म से विश्वास दिलादो कि इस घड़ी को तुम स्वयं अपने हाथ से स्मिथ साहब के मेम के गले में इसी प्रकार से पहिना दोगे,जैसे कि मैं न तुम्हें पहिनाया है।

मि॰ आर॰। "मैं प्रतिज्ञा करता हूं कि यदि वह स्वीकार करेंगी, तो मैं अवश्य मेम साहबा के गले में पहना दूंगा"।

बादशाह। "तुम उनसे कहदेना कि यह मेरा स्मरणार्थं चिन्ह है। बस वह फौरन लेलेंगी। खां! हमारे मित्र के लिए मूल्यवान खिलत और ५०० मोहर मंगावो"।

खिलत लाईगई जिसमे दो कश्मीरी शाल थे, इनमें बड़े कारीगरी के काम बने हुए थे और एक गुलूबन्द भी था। बादशाह ने अपने ही करकमलों से शाल उन्हें उढ़ाया और नापित भी

अपना हाथ लगाए हुए सहायता कर रहा था। मि० आर० मारे गरमी के पसीने में नहागए, परन्तु मनही मन में मारे आनन्द और आल्हाद के फूले नहीं समाते थे। उस रात की बैठक बहुत देर तक रही। बादशाह सलामत ने स्मिथ साहब और उनकी बीबी की बातों के सिवाय और कोई बात ही न की और उनकी बहुत सी वे बातें भी कह डालीं जिनका उल्लेख करना मैं उचित नहीं समझता हूं।

निदान जलसा समाप्त हुआ। हमारी पालकियां तो लगी ही हुई थीं। बादशाह सलामत ने चलती समय मि० आर को बड़े प्रेम से हाथ मिलाकर विदा किया और आप खवासों पर सहारा दिए हुए अन्तःपुर सिधारे। मेरे मित्र खिलत पहने ही हुए नीचे तक आए, जहां हमलोग की सवारियां लगी थीं।

दूसरे दिन सवेरे हमलोग खाही रहे थे कि नवाब का आदमी ५०० मोहरों की थैली, जिसे मि० आर को बादशाह ने खिलत के साथ देने को कहा था, लेकर आया। मि० आर दिखौआ उसे लौटा देना चाहते थे, पर मैंने उन्हें समझाया कि यदि लौटा दी जायगीं, तो बादशाह भारी अपमान समझेंगे। सारांश यह कि बहुत समझाने बुझाने पर उन्होने ले लेना स्वीकार किया *। दरबार के नियमानुसार उसको सिर आखों से स्वीकार करलेनाही उत्तम था और फेर देने से यह अर्थ लगाए जाते कि यह रकम कम समझ कर अस्वीकृत हुई है और

* अब कैसे गप से लेलिया, भेंट की मोहरों की बात तो याद न रही होगी ?

जायनाह का अपमान किया गया है।

इसके थोड़ी देर बाद बादशाह का चोबदार मुझे बुलाने आया। मैं शीघ्रही दरबार को चलागया। ज्योंहीं बादशाह सलामत के सामने गया, त्योंहीं उन्हों ने कहा कि "तुम्हारे मित्र से मिलकर मैं बड़ा प्रसन्न हुआ। उन पर मेरा स्नेह सा होगया है उनसे कहो कि वह यहीं रहकर मेरी नौकरी करलें। उनसे मेरी खूब पटेगी"।

यह सुनकर राजनापित को कुछ दुख हुआ, क्योंकि जब मैं जाने लगा, तब वह दरवाजे के बाहर आकर मुझसे पूछने लगा कि 'क्यों जी, क्या तुम्हारे मित्र रहेंगे'?

मै। 'मैं नहीं कह सकता। हां बादशाह के कृपादृष्टि से वह प्रसन्न तो मालूम देते हैं'।

घर लौट कर मैंने बादशाह का सन्देसा उनसे कह-दिया। परन्तु यह सब निष्फल था। क्योंकि एक परदेशी को बादशाह की नौकरी से बढ़कर अपने घर और अपने जन्म-भूमि की अधिक उत्कंठा होती है। वह कृतज्ञ तो थे, पर जाने की इच्छा उनकी प्रबल थी। उसी दिन सांझ को वह लखनऊ से चलदिए।

पाठकों के चित्त में यह बात उत्पन्न होती होगी कि ऐसे लुटाने से अर्थात् जब हजारों रूपये, सैकड़ों मोहरें, योंही लोगों को देदी जाती थीं और राजनापित के लाखों के बिल अलग होते थे, तब बादशाही खजाना क्या खाली नहीं होजाता होगा। पाठकों का यह सोचना निस्सन्देह उचित और यथार्थ है, क्योंकि अवध राज्य की आमदनी नाम को डेढ़ करोड़ की होगी और इसी में

समस्त राज्य कर्मचारियों इत्यादि का खर्च भी था। परन्तु स्मरण रखना चाहिए कि नसीरुद्दीन के पिता गाज़ीउद्दीन हैदर ने राजकोष में बहुत कुछ धन एकत्रित किया था, जिसे नसीरुद्दीन ने फूंक ताया। वार्षिक राज्य कर के अतिरिक्त राजदण्ड इत्यादि से भी इतनी आमदनी होती थी कि बादशाही इनाम अकराम देने पर भी बहुत कुछ बच रहता था। इनके सिवाय बादशाह के वंशजों के धन भी उनके हाथ लगा करते थे। यद्यपि इतनी कुछ आमदनी थी, तो भी नसीरुद्दीन के राज्य के अन्त होने के दो तीन वर्ष पहिले दरबार में रुपए के कमी की चिल्लपों मची रहती थी॥

छठवां अध्याय ।

केशरी महलात ।

शाही महल अर्थात 'फरहत बख्श' के विषय में यद्यपि थोड़ा बहुत लिखा जा चुका है, फिर भी बहुत बातें वर्णन करने योग्य रह गई हैं। बाहर से देखने में यह बड़ा भारी और विशाल राजगृह मालूम देता था, इसमें बड़े बड़े कमरे, बड़े बड़े तालाब, सजी हुई हौजें, जगह २ पर बाग और पुष्पवाटिकाएं और इन्हीं के बीच बीच में मकानात और कोठियां बनी हुई थीं, परन्तु देखने योग्य इनके अन्दर की सजावट और चीजें थीं। दरवाजों पर भारी २ मूल्यवान परदे और दीवारों पर सुनहरे और रुपहले कारीगरियों के काम, आंखें चौंधिया देने वाली भांति २ की फुलकारियां और उनमें भी भड़कीले रङ्गों

की चित्रकारियां, चित्र विचित्र वस्तुएं और चमकने वाले किरणदार झाड़ फानूस इत्यादि विशेष करके देखनेही योग्य थे।

इस महल का वह कमरा, जिसमें राजसिंहासन रक्खा हुआ था, विशेष करके वर्णन करने योग्य है। नसीरुद्दीन हैदर को अङ्गरेजियत का खप्त था ही, जैसे और बातों में उन्हों ने अङ्गरेजियत का अनुकरण किया था, उसी प्रकार इस राजभवन में भी बहुत कुछ परिवर्तन कर दिया था। इस कमरे के दरवाजों पर किमखाब और ज़रबफ़ के पड़दे पड़े हुए थे, जिन्हें देख कर चित्त प्रफुल्लित हो जाता था। कमरे की खिड़कियों से जो मन्द और स्वच्छ प्रकाश अन्दर जाता था, उससे कमरे की महिमा और राजसिंहासन का गौरव द्विगुण हो गया था। इन परदों के बीच में कहीं २ पर अवध के बादशाहों के बड़े २ चित्र टंगे थे। ये चित्र किसी प्रकार बुरे न थे। बिशाप हेबर साहब का कहना ठीक है कि जिस चित्रकार ने गाजीउद्दीन हैदर का प्रतिरूप खींचा है, यदि वह लण्डन वा पेरिस का होता, तो उसका बड़ा नाम हो जाता। इस कमरे के परले सिरे पर शाही तख़्त रक्खा हुआ था और यह बड़ा मूल्यवान था। इसकी बनावट और कारीगरी में बहुत कुछ खर्च हुआ होगा! यह सिंहासन दो गज़ लाम्बा और दो गज चौड़ा था, इसकी बैठक भूमि से कई फुट ऊंची थी, इसके आगे छः सीढ़ियां लगी हुई थीं। इसके तीन ओर सोने के कटहरे लगे हुए थे। इस सिंहासन के पक्खे और पाए ठोस चांदी के थे, जिन पर अनमोल जवाहिरात जड़े हुए थे। इस तख़्त पर बहुमूल्य मसनद, तकिए बिछे रहते थे और अवध के अगले बादशाह उस पर
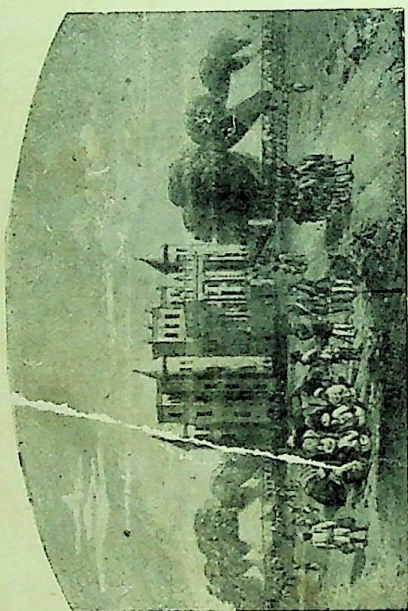
T. P. works,

कोठी फरहतबख्श ।

पलथी मार कर बैठा करते थे (जैसे विलायत में दर्जी बैठते हैं)। परन्तु नसीरुद्दीन को तो अङ्गरेजियत समाई हुई थी, उन्हों ने एक बहुमूल्य और अति उत्तम सोने और हाथीदांत की बनी हुई कुरसी मसनद की जगह इस तख़्त पर रखवा दी थी।

इस तख़्त पर एक चौखूंटा शामियाना तना हुआ था, इन के दण्डे अन्दर से लकड़ी के थे, जिन पर सोने के पत्तर मढ़े थे। इन दण्डों में और शामियाने में अनगिनत बहुमूल्य रत्न जड़े थे। शामियाने के आगे एक बड़ा पन्ना लगा हुआ चमक रहा था। कहा जाता है कि इसके बराबर का पन्ना जगत भर में नहीं है। तख़्त के परदे भी कमरों के सदृश लाल मखमल के थे, जिन पर सुनहरी जरदोजी के काम बने हुए थे और इसके किनारों पर मोतियों की झालरें टँकी हुई थीं। इस सिंहासन के दाहिनी ओर रेजिडेण्ठ साहब के लिए एक सुनहरी मुलम्मे की कुरसी सदा बिछी रहती थी।

'दरबारे आम' के दिन अथवा राजसभा के समय हिन्दुस्तानियों में अवध के उमरा, नवाब इत्यादि और अङ्गरेजों में से वे अफसर जिन्हें रेजीडेण्ट आज्ञा देते थे, इसी कोठी में बादशाह के सामने हाजिर होते थे। जैसा मैं ऊपर लिख चुका हूं, ये लोग हाथों में नजर (भेंट) लिए हुए सामने आते और खूब झुक झुक कर सलाम करते थे। जिन पर बादशाह प्रसन्न रहते, उनकी भेंट को वे उङ्गलियों से छू लेते और जिनसे कुछ रुष्ट रहते, उनको दूरही से देख कर गरदन हिला देते। नवाब वजीर भेंट लेकर तख़्त के एक किनारे रखते जाते और दर्बारी लोग भेंट दे देकर उलटे पांव अर्थात बिना पीठ मोड़े हुए दाएं

वा बाएं हट जाते। अङ्गरेज लोग दाहनी ओर और हिन्दु-स्तानी लोग बाईं ओर हट कर खड़े हो जाते थे। जब सब लोग भेंट दे चुकते, तब बादशाह सलामत एक हार रेजिडेण्ट के गले में डाल देते और रेजीडेण्ट साहब एक हार बादशाह को पहिना देते। तदुपरान्त ये लोग कमरे के बीच में आकर खड़े होते, फिर जिन लोगों का बादशाह सत्कार करना चाहते, अथवा जिनकी मर्यादा रेजीडेण्ट बढ़वाना चाहते, उनको हार पहनाए जाते थे। ये हार प्रायः रुपहले बादले के बने होते थे। हम प्राइवेट अनुचरों को भी कई बेर ये हार मिले थे, परन्तु हमलोग दरबार के उपरांत उन्हें हिन्दुस्तानी जौहरियों के हाथ बेच डालते थे। इनका मूल्य पांच रुपए से लेकर पचीस रुपये तक होता था।

इस कृत्य के उपरांत दरबार बरखास्त होता था और रे-जीडेण्ट को पहुंचाने दरवाजे तक बादशाह प्रायः जाया करते थे और बिदा करती समय उनके हाथ पर थोड़ासा गुलाब का अतर डाल कर "खुदा हाफिज" कहते थे। इसके पश्चात बाद-शाह जल्दी से अपने प्राइवेट कमरे में चले जाते, जहां हम लोग पहिले ही से पहुंचे रहते। फिर वहां बादशाह अपना ताज और जामा उतार कर एक किनारे फेंक देते और कुरसी पर बैठ कर उङ्गलियां चटकाते हुए कहते, "खुदा का शुक्र है, जो जल्दी छुट्टी हो गई, हां यारो 'ताजः ब ताजः नौ बनौ'। शिष्टाचारी तो मुझे थका मारती है"।

बादशाह के इस इमामबाड़े की, जो 'शाह नजफ' के नाम से विख्यात है, बनावट लखनऊ की इमारतों में निस्सन्देह
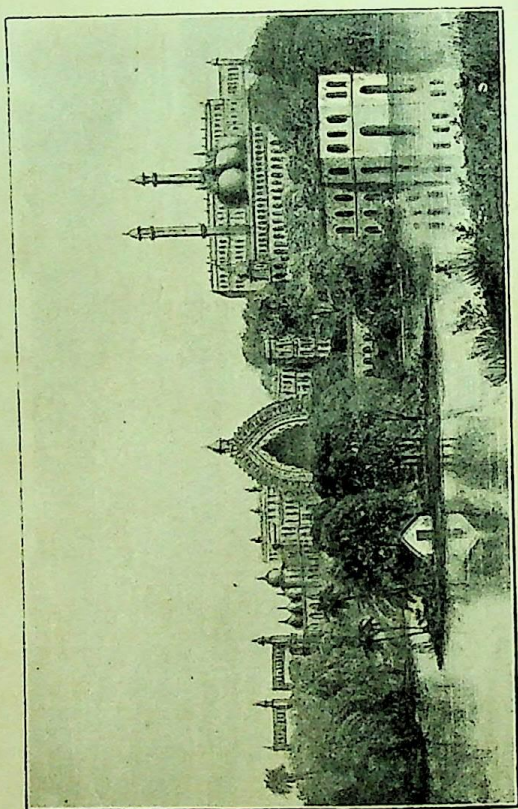
T. P. works.

रूमी दरवाज़ा और बड़ा इमामबाड़ा ।

सब से उत्तम है। शीया सम्प्रदाय के मुसलमान मुहर्रम की 'इज्जादारी' अर्थात् ताजिएदारी के लिये जो इमारत बनाते हैं, उसे इमामबाड़ा कहते हैं। इसका सविस्तर वर्णन आगे चल के अन्तिम अध्याय में लिखा जायगा। प्रत्येक माननीय पुरुष अपना २ इमामबाड़ा अलग बनवाते हैं और उसके मालिक मरने पर प्रायः उसी में गाड़े भी जाते हैं।

बड़ा इमामबाड़ा लखनऊ में रूमी दरवाजे के पास है, यह फाटक तुरक देश के उस फाटक के सदृश बना है, जिसके कारण 'तुरक के सुलतान' को 'बाबे-आली' का पद मिला है। रूमी दरवाजा और इमामबाड़ा दोनों की रचना बहुत ही सुन्दर है, और दोनों इमारतें एक टक्कर की हैं। इमामबाड़े के सामने बड़े बड़े दो चौखूंटे सहन हैं, जिनमें उत्तम २ तराशे हुए पत्थरों का फर्श लगा है। बाहरी सहन से भीतरवाला सहन कई फुट ऊंचा है।

इस इमामबाड़े की बनावट लदाव की है, जिसे बिशाप हेबर साहब * 'गाथिक' बनावट की लिखते हैं।

इस इमारत में नुकीले कलश हिन्दुओं के शिवालयों के सदृश लगे हैं और गुम्बद मुसलमानों के मसजिद के से बने हैं, यह बड़ी इमारत बहुत ऊंची, भारी, अत्युत्कृष्ट, महत्व विशिष्ट और सुन्दर है। इसके बीच का दालान कुछ ऊपर १५० फिट लम्बा और ५० फिट चौड़ा है। इसकी शोभा और शान को इसी बात से समझ लेना चाहिये कि एक धीर पुरुष ने,

* इन्हीं के विषय में एक कहावत अब तक लोगों में विख्यात है कि "जिसे न दे मौला, उसे दे आसुफुद्दौला।"

उसे स्वयं देख कर लिखा है कि अवध के बड़े दानी और महा प्रतापी नवाब आसफुद्दौला * ने इस इमामबाड़े में दस लाख पाउण्ड (अर्थात देढ़ करोड़ रुपए) के झाड़, फानूस और आईने सजाए थे ।

अब मैं इमामबाड़े को छोड़ कर "मारटीन साहब की कोठी" का विवर्ण प्रारम्भ करता हूं । इस प्रकाण्ड गृह-समूह को जेनरल मारटीन साहब ने, जो एक फ्रांसीसी थे, अपने व्यय से बनवाया था । इस शताब्दी के आरम्भ में वे कम्पनी के पलटन में एक 'गोरा सिपाही' के पद पर भरती हुए थे, फिर वे नवाब अवध की पल्टन में चले गए, जहां क्रमशः उन्नति करते २ वे फौज के जनरेल बन गए और उन्हों ने बड़ा धन संचित किया । मुर्गबाजी में ये बड़ेही निपुण थे और नवाब सआदत अली खां को जो उस समय अवध की गद्दी पर थे, इनके साथ बाजी बद कर मुर्गों की जोड़ लड़ाने का बड़ा ही शौक था ।

मारटीन साहब एक लाख पाउण्ड (१५ लाख रुपया) केवल अपने जन्मभूमि 'लीयानस' में एक अनाथालय और स्कूल बनवाने के लिये छोड़ गए, और उतनेही धन से कलकत्ते में एक कालिज बनवा गए और फिर उतनाही धन लखनऊ में कालेज स्थापित करने को छोड़ मरे । उनके इच्छानुसार इन सब संस्थापनाओं (Institution) का नाम 'ला मारटीनियर (La Martiniere) रक्खा गया है । उनकी उक्त कीर्ति अब तक चली जा रही है और कालेज चल रहे हैं ।

---

* देखो कलकत्ता रिव्यू, खण्ड ३, पृ० ३८१ (Calcutta Review, Vol. III, page 381)
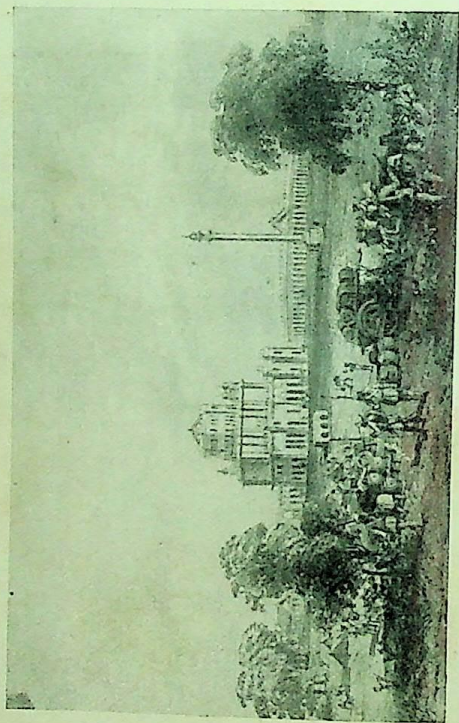
T. P. works,

ला मार्टीनियर की कोठी ।

जिसका नाम मारटीनियर की कोठी है। यह उनका निवास गृह था, जिसे उन्होंने अपना स्मारक चिन्ह 'सराय वा कारवां सराय के लिए छोड़ा था। मैंने सुना है कि इसका नाम उन्होंने अपने एक प्रिया के नाम पर रक्खा था, जिसे वह अपने जन्मभूमि फ्रांस में ही छोड़ आए थे और वह बिचारी इनके धनाढ्य होने से बहुत ही पहिले परलोक सिधार चुकी थी। इस लिए कि अवध के बादशाह, उसे जब्त न करलें वह उसी के अन्दर गाड़े गए, क्योंकि वह जानते थे कि मुसलमान बादशाह चाहे वह कैसा ही अन्यायी क्यों न हो, पर वह कब्र की रक्षा अवश्य करता है। यात्री लोग इस इमारत को देखने जाते हैं, उनको उक्त साहब की कब्र नीचे तहखाने में दिखाई जाती है। इनकी प्रति मूर्ति स्वेत सङ्गमरवर की बनी हुई ताबूत पर रक्खी है, जिसे दो रंगे हुए सिपाहीयों की मूर्ति उठाए हैं। इसकी दस्तकारी बहुत अच्छी नहीं है।

जनरेल साहब के मरने पर, जब इनकी कोठी का माल असबाब नीलाम हुआ, तब इसको 'कम्पनी बहादुर' के एजंट ने गवरनर जनरैल की कलकत्तेवाली कोठी को सजाने के लिए खरीद लिया। ये सब असबाब 'कम्पनी' को मुफ़्त मोल हाथ लगे, क्योंकि कम्पनी के मुकाबले में बादशाह ने बोली बढ़ा कर असबाब लेना नहीं चाहा। कम्पनी बहादुर को इस बनियऊ चाल पर बड़ा घमण्ड था। ऐसी चालाकी तो कोई नीच बिसाती और दुकड़हा बनिया भी न करता होगा।

यदि कान्स्टेन्शिया (मारटीन साहब की कोठी) के विषय में इतना ही कहा जाय कि वह एक बड़ी भारी, महान और

चमत्कारी इमारत है, तो मानों उसके विषय में सभी कुछ कहा जा चुका। इसमें के किसी किसी स्थान को देख कर मुझे वरसेल्ज का बाग याद आजाता था, विशेष करके इसमें के चौपड़वाले जलाशय को देख कर, जिनके किनारे किनारे कटे छटे हुए गाछ लगे हुए थे । यह बात तो प्रत्यक्षही है कि प्रचुर धन लगा कर यह सब दृश्य बनाया गया था। फिर भी यह इमारत सुहावनी और एक सी न थी। क्योंकि इसके सहन और फौवारे तो अंगरेजी ढंग के थे और कंगूरे और गुम्बज देशी चाल के। कमरों में विलायतीपन टपकता था, तो बरान्दे और खिड़कियों से हिन्दुस्तानी पन झलकता था । कांस्टेन्शिया का प्राशस्थ्य और विलक्षणता ही प्रधान गुण है।

लखनऊ की मसजिदों और बाजार की बनावट का अन्य देशी मसजिदों और बजारों से ऐसा कुछ अधिक प्रभेद नहीं है कि जिनका वर्णन यहां किया जाय। यदि यहां कुछ निराला पन है तो इतनाही कि यहां के बाजारों में लोग हथियार बांधे बांके तिरछे बने घूमा फिरा करते हैं। यहां के रईस लोग जब कभी जाते हैं, तब उनके साथ बहुत से हथियारबन्द नौकर साथ रहते हैं और जितना ही वे अमीर होते हैं, उतने ही अधिक आदमी उनके आगे पीछे चला करते हैं। इन शोहदों के कारण जरा जरा सी बात पर बहुधा तलवारें खिच जाया करती हैं। जब कभी लड़ाई हो जाती है, तब इन के गोलमाल और चीक पुकार की खबर दूर दूर तक पहुंच जाती है। उस समय शांत प्रकृति के पुरुष वा भीरू लोग उस गली की ओर ही नहीं जाते और जो लोग लड़ाके और गुण्डे होते हैं, उनकी भीड़ की भीड़

उमड़ आती है। कभी २ तो कई खून हो जाते हैं, कई लाशें गिर जाती हैं। अखबारों से मालूम होता है कि अब सन् १८५५ में भी लखनऊ की वही दशा है, जो सन् १८३१ में थी॥

लखनऊ के बड़े २ मकानों में एक विशेषता और है, जिसका वर्णन रहा जाता है अर्थात् वह तहखाना है, जिसके अन्दर गरमियों में जब सूर्य्य का ताप बहुत बढ़ जाता है तब लू से बचने के लिये दिन में लोग रहते हैं। आश्चर्य्य की बात यह है कि इसी जगत के एक भाग में तो अत्यन्त गरमी से बचने के लिये तहखाने बनाते और दूसरे भाग में अत्यन्त शीत से बचने के लिये बिलों में घुसे रहते हैं। एक इस सिरे दूसरा उस सिरे।

शाही महल में भी तहखाने बने हुए थे, जिनके सहन भूपृष्ठ से नीचे थे और हम योरोपियन दरबारियों के लिये तो ये तहखाने बहुतही घुप्प थे। उसकी बन्द हवा से हमारा चित्त घबड़ाने और सांस घुटने लगता था। मैं तो इन अन्धेरी और घुट कमरों की अपेक्षा, जिनमें जापनाह बैठा करते थे, ऊपर के कमरों में रहकर गरमागरम हवा के थपेड़े खाना अच्छा समझता। भाग्यवश बादशाह हमलोगों को इन तहखानों में बहुत नहीं ठहराते थे, क्योंकि स्वयं बादशाह सलामत का भी जी घबड़ा घबड़ा उठता था। सच तो यह है कि महल में पङ्खों के बराबर लगातार चलते रहने से चाहे कैसीही गरमी पड़ती हो उनको गर्मी का अनुभव नहीं हो सकता था। कभी २ जो वे तहखाने में बैठते भी तो केवल अवध के उमरा के एक फैशन की बात समझ कर, परन्तु इसमें बादशाह को सुख वा आनन्द नहीं मिलता था। वे उसके नियमबद्ध भी नहीं होते थे। अतएव गरमियों

में बहुत दिनों तक वे तहखाने में अपनी बैठक नहीं रखते थे।

लखनऊ की दूसरी विचित्र बात यह है कि यहां के बाजारों और गलियों में भिखमङ्गों की झुण्ड की झुण्ड देखने में आती है और इसको भी मानों वहां का एक अनूठा दृश्य समझना चाहिये। इस विषय में कई लोग बहुत कुछ लिख चुके हैं, इस लिये यह आवश्यक नहीं है कि मैं भी सविस्तर लिख कर 'पिष्टस्य पेष्टनम्' करूं। जिन लोगों ने इटली के नगर देखे हैं, उनके लिये तो यह लखनऊ का दृश्य नया नहीं है। अब तो सब लोग फ्रांस, राइन और इटली को थोड़ेही दिनों में जा कर देख आ सकते हैं, अतएव लखनऊ के भिखमङ्गों के झुण्ड का वृत्तान्त विशेष लिखना मैं आवश्यक नहीं समझता। किसी किसी ने लिखा है कि इस लखनऊ में बुढ़िया भिखमंगिनें इतनी हैं कि इस जगत के किसी भाग में उतनी न होंगी। यह बात ठीक है। परन्तु इसका कारण मैं नहीं बता सकता।

लखनऊ के हर गली कूचों में कोई न कोई भिखमङ्गा भीख मांगता अवश्यही मिलेगा—कहीं लड़के, कहीं जवान, कहीं बूढ़े, कोई रोगी, कोई लंगड़ा, कोई लूला, कोई कोढ़ी। मर्द और औरत 'दाता भला करे' की आवाज लगाते, फटे हालों, रोनी सूरत बनाये, भीख मांगते फिरा करते हैं। यहां की यह एक चलन होगई है कि जब कोई रईस बाजार के सैर सपाटे को जाते हैं, वा जब कोई तरतेहवार होता है, तब यहां खैरात खूब दीजाती है, जिससे इस भिखमङ्गी का जोर अधिक होगया है मानों यह भी निखट्टूओं का रोजगार सा होगया है और निकम्मों की संख्या बढ़ गई है। हिन्दुस्तान में यूंही लोगों को

बिना हाथ पैर हिलाये ही बहुत कुछ मिल जाया करता है, और यहां के लोग भी बड़े सन्तोष के साथ आशा लगाये बैठे रहा करते हैं। गर्म देशों में सन्तोष के साथ आशा पर बैठे रहने की बेल खूब फूली फली है। परन्तु लखनऊ के फक़ीरों में एक अद्भुत बात, देखने में आई, वह यह है कि जितने मर्द भिखमङ्गे हैं, वे सब हथियार से लैस रहते हैं और अपने भिखमङ्गी करने पर उन्हें लज्जा नहीं आती। लज्जा तो दूर रही उलटे वे लोग अपने इस पेशे पर अठलाते हैं। ढाल तलवार बांधे भिखमंगे जब किसी अमीर को देखते हैं, तब चट हाथ फैला कर आशीष देने लग जाते हैं—'ईश्वर सदा बनाये रक्खे, खाने को कुछ मिलजाय'। जहां उन्होंने 'दोआ' दी बस वह एक दिन की मजदूरी पाने के हकदार होगए और यदि किसीने उनको दुत्कार बताई किंवा उनकी ओर से मुंह मोड़ा, तहां वे खुल्लमखुल्ला "मां बहिन बखानने" लग पड़ते हैं। मुंह दर मुंह गाली देते हैं।

लखनऊ में भिखमङ्गी को लोग बुरा नहीं समझते, यह बात उनकी टिर और ऐंठन सेही प्रगट होती है। "मांगें भीख पूछें गांव की जमा" यह लखनऊ केही फकीरों में देखने में आया। जब किसी अमीर के घर लड़का होता है, तब ये लोग बैठे हिसाब लगाते हैं कि अमुक के घर में लड़का हुआ है, अबकी इतना मिलेगा, अथवा लड़की हुई, इतनी खैरात बटेगी। उन को रत्ती रत्ती मालूम रहता है कि फलां खुशी में इतना खर्च होगा, उसमें से इतना खैरात किया जायगा। मैंने एक विख्यात फकीर का हाल सुना है, इसके पास स्वयं उसीका हाथी था, जिसपर चढ़ कर वह रोज शहर का चक्कर लगाता और

भीख मांगता फिरता था और अपने चेलों से भेंट लिया करता था ॥
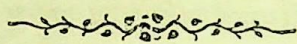
सातवां अध्याय।

खूनी घोड़ा।

एक दिन बग्घी पर सवार होकर लखनऊ की एक सुन्दर सड़क पर मैं जा रहा था। मेरे साथ मेरे एक मित्र भी थे, हम लोग गोमती के किनारे की सड़क से महल को जा रहे थे। इस सड़क पर बराबर सन्नाटा देख कर मुझे आश्चर्य हो रहा था, दूर तक किसी आदमी की सूरत तक नहीं दिखाई देती थी और यदि इक्का दुक्का आदमी जाता दिखाई भी पड़ जाता था, तो वह सड़क कतरा कर भागा चला जाता था। जहां के राज्य में नित्य अंधाधुन्ध होता रहे और राजा स्वतंत्र और अधर्मी हो, वहां नित्य ऐसी २ बातें होती रहती हैं कि जिसे देख कर विदेशी दङ्ग रह जाय। हमलोगों ने कानाफूसी करके यही विचार किया कि आज किसी को प्राणदण्ड दिया जाने को है, किंवा ऐसी ही कोई नई बात हुई है, जिस भय से लोग घर से नहीं निकलते।

चलते चलते एक जगह मैं क्या देखता हूं कि बीच सड़क में लहू लुहान, कुचली कुचलाई किसी की लाश पड़ी है! हम-लोग बग्घी ठहरा कर देखने को उतर पड़े, देखा कि वह एक स्त्री की लाश है, उसका अङ्ग भङ्ग ऐसा हो गया था कि पह-चानना कठिन था। वह लाश रून्दी खून्दी, घोर रूप से घायल पड़ी थी। उसके कपड़ों के चीथड़े २ हो गए थे। उस के चेहरे

को किसी ने दांतों से चिचोड़ कर ऐसा चबा डाला था कि वह निरा मांस का एक लोथड़ा जान पड़ता था। इसके लम्बे २ बाल जो उखड़ कर सड़कों पर पड़े थे, वे लहू में सने हुए थे। यह घटना देख कर हमारा रोमाञ्च हो गया था और हमसे देखा नहीं जाता था। हमलोग वहां बहुत नहीं ठहरे।

हमलोग आगे बढ़े चले जाते थे, रास्ते में कहीं चिड़ी का पूत तक नहीं दिखाई देता था। सारे सन्नाटा छाया हुआ था। थोड़ी दूर आगे जाने पर एक और लाश किसी युवा की सड़क के एक किनारे पर पड़ी मिली। पासही के एक मकान की छत पर एक बादशाही सिपाही खड़ा दिखाई दिया, जो सड़क पर चारों ओर देख रहा था।

मैंने पूछा, 'यह क्या बात है'।

सिपाही। "खूनी घोड़ा आज छूट गया है। अरे! वह फिर इसी ओर आ रहा है। साहब! अपने को बचाओ, भागो, आज वह गरमाया हुआ है और खूनी हो रहा है।"

मैं इस घोड़े के विषय में सुन चुका था कि बादशाह के सवारों में से एक सवार का घोड़ा बड़ा क्रूर और कट्टर है। इस का नाम 'आदमी-खानेवाला' वा 'खूनी घोड़ा' था, क्योंकि वह कई आदमियों की जान लेचुका था। सिपाही ने फिर पुकार कर कहा, 'साहब देखो वह इसी ओर दौड़ा आ रहा है, अपनी जान बचाइये, अपनी जान बचाइये'।

इतनेही में हमने देखा कि दूर से एक कुम्मैत रङ्ग का बड़ा घोड़ा हमारी ओर दौड़ा चला आ रहा है। वह मुंह में एक बच्चे को धरे हुए बड़ी क्रूरता के साथ झिंझोड़ रहा था।

ज्योंही उसने गाड़ी को देखा बस बच्चे को तो उसने सड़क पर फेंक दिया और बड़ी जोर के साथ वह हमारी ओर झपट पड़ा। अभी वह हमसे दूरही था, परन्तु हमारा भी एक एक पल अनमोल था। हमारा घोड़ा मारे डर के भड़कने लगा। हमलोगों ने झटपट गाड़ी फेर कर घोड़े को सरपट दौड़ा दिया। खूनी घोड़ा भी हमारे पीछे दौड़ा आ रहा था। भागते २ हमलोग एक अहाते में घुस गए, जिसमें लोहे का फाटक लगा हुआ था, यह अहाता उसी रास्ते में था जिधर से हमलोग अभी गए थे। खूनी घोड़ा भी हमारा पीछा किये हुए दौड़ा चला आ रहा था। भाग्यवश हमलोग इस अहाते में कुछ पहिले पहुंच गए। खूनी घोड़े की टापों की आवाज बराबर आरही थी।

जैसेही हमलोग अहाते में घुसे, वैसेही हमारे साथी बग्घी पर से कूद पड़े और उन्होंने झटपट फाटक बन्द कर दिया और कुडां लगा दिया। यह एक पल का काम था। वह कुण्डा लगाही चुके थे कि खूनी घोड़ा भी सिर पर आ पहुंचा। भाग्यवश फाटक बन्द हो चुका था। इस घोड़े के गरदन पर खून की छीटें पड़ी हुई थीं, मुंह से ताजा खून टपक रहा था और उस का जबड़ा कई जगह से आदमियों की हड्डी और उनके जान तोड़ती समय की रगड़ झगड़ और नोच खसोट से छिला हुआ था। अब वह यहां पहुंच कर, लोहे के कटहरे के बाहर खड़ा, क्रोध में भरा, कान चपटियाये, नाक फुलाये हुए, आंखें निकाल निकाल कर हमारी ओर घूर रहा था। इस समय इसकी सूरत बड़ी भयानक थी। इसका क्रोध भरा हिनहिनाना सुनकर हमारा घोड़ा थर थर कांप रहा था, मानों उसे जूड़ी चढ़ आई है। यह

नृभक्षक घोड़ा कटहरों के चारों ओर घूम घूम कर हमें घूर रहा था, पर उसका कुछ वश नहीं चलता था, क्योंकि यह लोहे के कटहरे बड़े मजबूत थे। उसको अन्दर आने का कहीं से रास्ता नहीं मिलता था। जब उसे कोई दांव घात नहीं मिला, तब झुंझला २ कर कटहरों पर दो लत्ती झाड़ने लगा। फिर सिर उठाकर, दुम सीधी और कान खड़े करके और कटहरे पर अगले दोनों सुम रखकर, वह अलफ होगया। बहुत से सिपाही यहां घात में लगे खड़े थे। उन्होंने अवसर पाकर फन्दा उसके गले में डाल दिया, और फिर उसे रस्सों से जकड़ दिया और अस्तबल में लेजाकर बांध दिया। यदि आपलोग पूछें कि उस बिचारी औरत की लोथ, युवा और लड़के की लाश का क्या हुआ? उन का हाल हमको मालूम नहीं हुआ, परन्तु इसमें सन्देह नहीं कि उनके कुटुम्बी उनकी लाश को मृतक-क्रिया करने लेगए होंगे।

भोजन करती समय मैंने यह सब वृत्तान्त बादशाह सलामत से कहा।

बादशाह।'हां जी, मैंने भी कई बेर इस घोड़े के विषय में सुना है, मालूम होता है कि वह बड़ाही भयंकर घोड़ा है।"

मैं। 'जापनाह, वह शेर से भी अधिक हिंसक है'।

बादशाह। "शेर से भी अधिक! खूब! अच्छा तो फिर शेर से उसकी लड़ाई हो, देखें 'भूरिया' से उसकी जोड़ कैसे निपटती है।"

विदित रहे कि 'भूरिया' एक शेर का नाम था, जिसे बादशाह बड़ा प्यार करते थे। यह शेर हिमालय की तराई के एक गांव के पास से पकड़ कर आया था, इस गांव का नाम 'भूरिया'

था, इसलिये इस शेर का नाम भी 'भूरिया' पड़ गया। अभी यह शेर पट्ठा था। बादशाह उसे कभी किसी शेर वा हाथी से नहीं लड़ाते थे और यदि लड़वाते भी, तो ऐसे जानवर से लड़ाते कि जिसे वह सहज में जीत ले सकता था।

दूसरे दिन सवेरे दोपहर का खाना खाने के पहिलेही, हमलोग चाँदगंज की कोठी में एकत्रित होगए। इस कोठी के आगे ६० गज लम्बा चौड़ा सहन था, इसके चारों ओर मकानात बने हुए थे, जिनके ऊपर के खण्ड में बराम्दे थे। इस बराम्दे के नीचे मोटे२ बांसो के ठाठर बांध कर सहन घेर दिया गया था, मानों वह एक बड़ा भारी पिंजड़ा बनाया हुआ है। इसके अन्दर कम दाम की एक टटुई को बांध दिया था कि जिसे देखकर 'खूनी घोड़ा' पिंजड़े से उस अहाते में आजाय।

ऊपर के खण्ड में बादशाह सलामत पधारे और मसनद पर बैठ गए और नियमानुसार दासियों ने मोरछल करना आरम्भ कर दिया। हमलोग बादशाह के दाएं बाएं वा छज्जे के पास खड़े थे। यहां से प्रत्येक व्यक्ति तमाशा देख सकता था और उक्त अबलाएं भी इस तमाशे को देखने की बड़ी उत्सुक हो रही थीं।

हुकुम दिया गया और 'भूरिया' का पिंजड़ा बांस के ठाठर के पास लाया गया। इस ठाठर में पहिले ही से एक दर्वाजा बना हुआ था। इसका और पिंजड़े का दरवाजा खोला दिया गया, भूरिया झटपट कूद कर मैदान में आया और पोंछ हिला२ कर 'खूनी घोड़े' और टटुई को घूरने लगा। वास्तव में इस भूरिया से बढ़ कर सुन्दर शेर समस्त भारतवर्ष में मिलना
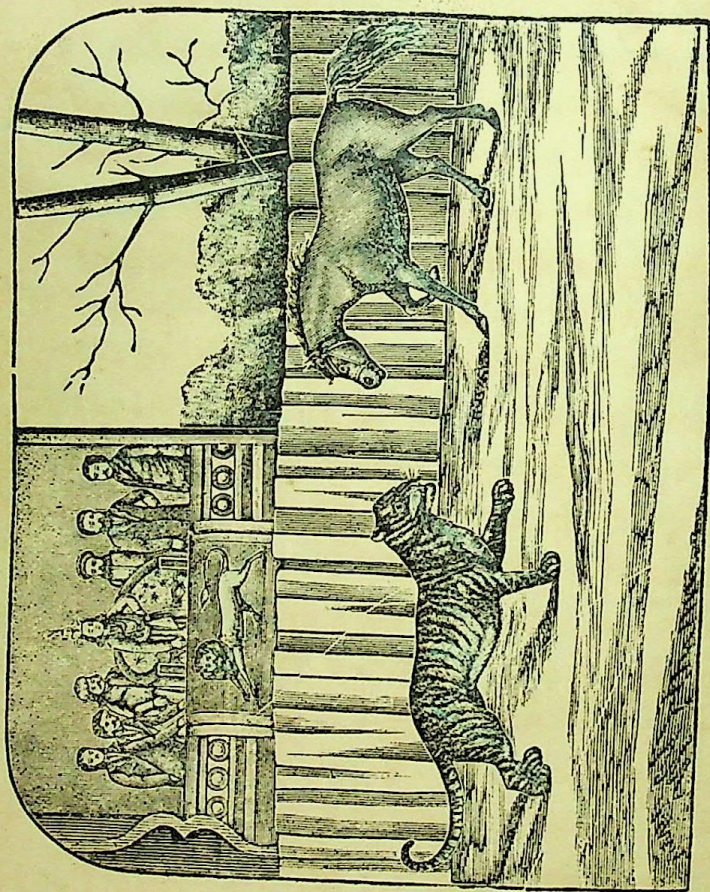
'भुरिया' और 'खूनी घोड़ा'

कठिन है। उसकी चमकदार खाल, जिसपर क्रमशः लाल धारियां पड़ी हुई थीं, उस छोटीसी टट्टुई की खरहरी खाल की अपेक्षा बड़ीही सुहावनी मालूम देती थी। इस 'खूनी घोड़े' की चिकनी, चमकीली श्रौर स्वच्छ खाल के सामने भी भुरिया के खाल की चमक दमक बहुत बढ़ी चढ़ी थी।

एक दिन पहिलेही से शेर बिना चारा पानी के भूखा रक्खा गया था, जिसमें वह भूख के मारे विरोधी पर शीघ्रही आक्रमण करे। ठाठर में घुसतेही वह दोनों घोड़ों को विकाल दृष्टि से देखने लगा श्रौर दबे पांव धीरे २ उनकी ओर बढ़ने लगा। 'नृभक्षक' घोड़ा अपनी आंखें शेर की आंखों से बराबर मिलाये हुए खड़ा था, एक निमेष मात्र के लिये भी उसने अपनी दृष्टि उधर से न हटाई। घोड़ा अपनी गरदन नीची किये हुए श्रौर एक टांग कुछ आगे को बढ़ाये हुए, बड़े धैर्य्य के साथ खड़ा आक्रमण की अपेक्षा कर रहा था श्रौर भुरिया के साथ फेरे भी लगा रहा था। उसकी दृष्टि बराबर शेर परही जमी हुई थी। अब बिचारी टट्टुआनी का हाल सुनिये। मारे भय के वह तो पत्थरासी गई थी श्रौर बेजान के सदृश चुपचाप दुम दबाये कोने में खड़ी अपनी कुशल मना रही थी। वह इतनी सहमी हुई थी कि अपने बचाने के विचार की भी उसे सुध न थी। एक हलकी सी झपट के साथ भूरिया इस बिचारी टट्टुई की ओर लपका श्रौर उसने एकही थपेड़े से टट्टुई को भूमि पर धम से गिरा दिया श्रौर अपने दांत उसकी गरदन में प्रवेश कर दिये श्रौर चूस २ कर खून पीने लगा। यह निर्दयता का वध था, क्योंकि उस बिचारी घोड़ी ने कुछ भी हाथ पैर नहीं हिलाये।

अब बादशाह हाथ मल मल कर अङ्गरेजी में कहने लगे कि 'देखना, खून पीकर भुरिया और भी क्रूर होजायगा।' हम अङ्गरेजों ने भी हां में हां मिलाई। मोरछलवालियां यद्यपि अङ्गरेजी भाषा से अनभिज्ञ थीं, तथापि बादशाह को प्रसन्न और हँसते देख कर, पग रही थीं। आपुस में एक दूसरे की ओर देख देख कर मुस्कराईं और फिर तमाशा देखने लगीं।

तीन मिनिट वा पांच मिनिट तक (इससे अधिक नहीं) भूरिया बैठा उस घोड़ी का खून चूसता रहा। परन्तु उसकी दृष्टि बराबर 'खूनी घोड़े' ही की ओर लगी रही। घोड़ा भी आंखें भिड़ाये धैर्य्य के साथ खड़ा था, और वह तनिक भी भयभीत नहीं मालूम देता था। गरदन सीधी किये हुए, कनौटियां चढ़ाये, दुम उठाये अपने शत्रू [शेर] को घूर २ कर सावधानी के साथ वह देख रहा था, मानों वह भी युद्ध करने को प्रस्तुत है।

सारांश यह कि भूरिया ने टटुआनी का सब खून पीलिया और उसमे कुछ भी शेष न छोड़ा। तब उसने अपने पंजे लाश पर से उठा लिए और दो एक बेर फुरैरी लेकर, बदन चुराए हुए कठघरे के चारों ओर इस प्रकार दांव घात लगाता हुआ धीरे धीरे घूमने लगा, जैसे चूहे को पकड़ने के लिए बिल्ली धीमे धीमे चलती है। इसके चलने की चाप जरा भी नहीं सुनाई देती थी। भूमि पर यह अपने बड़े २ पंजे एक के पश्चात् दूसरा रखता था और उसके मुलायम तलुओं के कारण चलने की आवाज नहीं होती थी। वह अपने पंजे को धीरे से उठाता और पोले से भूमि पर रखता था। उसकी लाम्बी पीठ धीरे २ ज्यों २ आगे बढ़ती और ज्यों २ अपने अगले वा पिछले पैर उठाता

हुआ आगे बढ़ता, त्यों २ उसके कन्धे वा उसकी कमर उभड़ जाती और चलने में अंग के प्रसार और संकोच के साथ उसकी खाल झोल खाजाती, मानों उसकी हड्डियों से उसका कोई संबंध ही नहीं है। इस दृश्य को देख कर कौन भूल सकता है? और मोरछलवालियां और बादशाह तो इधर उधर भी देख रहे थे, परन्तु यूरोपियन लोग आंखें गाड़े हुए और कान लगाए हुए उनकी एक एक चाल को निहार रहे थे। घोड़ा बीच में खड़ा शेर के चक्कर के साथ फिरता जाता था। इसकी गरदन, कान, आंख वैसेही थीं, जैसी उपर लिख चुके हैं। शेर यद्यपि इतना बलिष्ट था, तो भी वह अब तक बिल्ली के सदृश दांव घात में धीरे २ चल रहा था। घोड़े के घूमने में जो उसकी टाप उठती और भूमि पर पड़ती थी, उसकी आवाज के सिवाय और कोई खटका नहीं सुनाई देता था। सभी लोग ध्यान लगाये चुपचाप तमाशा देख रहे थे।

अन्त को शेर ने एक छलांग मारी और बिजली के समान घोड़े पर जा गिरा। घोड़ा इसके लिये चाकचौबन्द खड़ाही था। ऐसा प्रत्यक्ष होता था कि भुरिया ने उसकी गरदन वा अगले अङ्ग को पकड़ना चाहा था, परन्तु घोड़े ने उस से भी अधिक फुरतीलापन दिखाया। इसने चट अपनी गरदन और कन्धे सिकोड़ कर ऐसा कुछ किया और भुरिया को पिछले पुट्ठों पर इस प्रकार लिया कि शेर के पिछले पंजे तो पुट्ठों के इधर उधर लटक गए और उसके अगले पैर भूमि पर जा पड़े। इस दांव से बचने का शेर को तनिक भी अवसर न मिला। वह सम्हलने भी न पाया था कि घोड़े ने अपनी नालदार दुलत्ती

इस जोर से फटकारी कि भुरिया भुमि पर दूर जा गिरा। हम लोग यह अच्छी तरह देख भी न सके कि वह पीठ के बल गिरा वा किस बल, क्योंकि वह गिरा तो उसका कुछ अङ्ग भुमि पर था और कुछ ठाठर पर। वह फिर फुरती के साथ उठ खड़ा हुआ और दांत पीसता हुआ दांव घात की ताक में फिर दबी चाल से चलने लगा, मानों कुछ हुआही नहीं है। घोड़ा अपनी जगह खड़ा क्रोध से फुंकार मार रहा था और दूसरी बार की अपेक्षा कर रहा था। उसके पिछले पुट्ठे घायल होगए थे और शेर के बलिष्ट पंजों के चिन्ह स्पष्ट दिखाई देते थे, जिनमें से लहू की धारा बह रही थी।

बादशाह। (एक अङ्गरेज अनुचर से जो उनके निकटही खड़ा था) 'अबकी बेर भुरिया घोड़े को मारही डालेगा'।

अनुचर। 'बेशक, हुजूर'।

अब फिर बिल्ली के समान एक एक कदम उठा कर भुरिया चारों ओर कावे काटने लगा, उसका गोल गोल भारी मुंह घोड़े ही की ओर था। धीरे धीरे पंजे उठाता और पोले पोले भूमि पर रखता हुआ वह घूम रहा था और उसकी धारीदार खाल, हड्डियों और पुट्ठों से अलग झोल खा रही थी। घोड़ा भी नथने फुलाये, चमकती हुई आंखें निकाले, शेर की चाल उसी प्रकार होशियारी के साथ देख रहा था, जैसा ऊपर लिखा जा चुका है। घोड़ा अपना सिर नीचे किये, गरदन बढ़ाये, कनौटियां चढ़ाये, शेर से आंखें लड़ाये, अगला एक पैर कुछ उठाये, खड़ा शेर की द्रुतगत तड़पान की अपेक्षा कर रहा था कि जैसेही वह छलांग मार कर उसपर आक्रमण करे (जैसे कि पहिले कर चुका

था) वैसेही फुरती के साथ यह भी अपना अङ्ग चुरा कर कुछ आगे को फलांग मारे।

पूरे आठ वा दस मिनिट तक भुरिया लगातार चक्कर लगाता रहा और घोड़ा भी बराबर आंखें भिड़ाये हुए बीच में घूमता था, बीच २ में दो एक बेर क्रोधपूर्वक वह फुफकार भी मार देता था। कभी कभी भुरिया अपना प्रकाण्ड मुख खोल कर जबड़ों पर के खून के धब्बों को, जो अब तक लगे हुए थे, अपनी जिह्वा से चाट लिया करता। एक बेर (केवल एकही क्षण के लिये) शेर फिर टटुआनी की लाश पर जाकर ठिठका, मानो वह उसका लहू फिर पीना चाहता था, परन्तु वह शीघ्रही उधर से लौट पड़ा और पुनः चक्कर काटने लगा।

अन्त को पुनराक्रमण का समय आगया। भुरिया मृत टटुआनी के पास ठहर कर इस फुरती से उछला कि हम सब लोग उसकी तड़पान देखकर सहम गए और कांप उठे, यद्यपि हमलोग ऊपर के खण्ड में खड़े थे और उसकी तड़पान का आसरा देख रहे थे। मोरछलवालियों में से तो दो एक झिझक कर दबे मुंह चीखही उठीं। उछाल मारने से पहिले भुरिया न तो ढकारा और न गुर्राया। ऐसा मालूम दिया कि जैसे किसी गलवनिक बाटरी (Galvanic Battery) से निकल कर तड़ित शक्ति ने उसे अचानक हवा में उठा दिया।

परन्तु खूनी घोड़ा इस अद्भुत औचक में न आया। अबकी बेर इसने अपनी गरदन और भी नीची करली और ऐसा जान पड़ा कि फलांग मारे हुए शत्रू के नीचे आपही पैठ गया। अब फिर भुरिया के पंजे उसके पुट्ठों में गहरे धस गए, पर आगे से

तनिक और पिछले भाग पर, इस बेर भुरिया का मुंह पोंछ से भी आगे जा लटका था और पिछले पंजे घोड़े की कोख में धंस गए। एक क्षण मात्र भुरिया इस दशा में पड़ कर कांप उठा और और अपने पेट के बल उसकी पीठ छाप लेना और दबा रखना चाहा, परन्तु इस 'बीर' घोड़े ने फिर कसकर लत्ती मारी और इतने जोर से उछला कि मानों कलाबाजी खाना चाहता है। अबकी बेर फिर उसने अपनी नालदार सुम इस जोर से भूरिया के मुंह पर तड़ातड़ लगाईं कि वह लुढ़क कर भूमि पर लम्बा-यमान होगया।

क्षण मात्र भुरिया भूमि पर पड़ा रहा, परन्तु फिर झट उठ खड़ा हुआ और उठते ही ठाठर के बराबर दौड़ने लगा, जिससे मालूम होता था कि अब वह आक्रमण करना नहीं चाहता, किन्तु भागना चाहता है। उसके जबड़े की हड्डी टूट गई थी और वह दुम दबाए, पीड़ा के मारे चिल्लाता हुआ ठाठर से निकल भागना चाहता था. जैसे कि कोई कुत्ता चाबुक खाकर दुम दबाए भागता है। खूनी घोड़ा अब भी आंख डटाए उसे देख रहा था, मालूम होता था कि अभी उसे भुरिया के फिर झपट पड़ने का डर बना हुआ है। भूरिया इतनी शीघ्रता के साथ दौड़ता फिरता था कि घोड़े को उसके साथ घूमते रहना कठिन पड़ गया। भुरिया को अब मुकाबिला करने का साहस न था, किन्तु अब उसे किसी प्रकार जान बचा कर भागने की पड़ी थी और वह आतुर होकर रोने लगा। नीचे से किसी ने चिल्ला कर कहा कि "अरे! मालूम होता है कि भुरिया का तो जबड़ा टूट गया है"। यह आवाज ऊपर तक आई और बाद-

शाह ने सुन ली"।

बादशाह। (हमलोगों से)--"भुरिया का जबड़ा टूट गया! अब इसे हटा लेना चाहिए।"

हमलोग। "हज़ूर की जैसी मरजी"।

इशारा कर दिया गया। पिंजड़े का दरवाजा खोल कर ठाठर का फाटक उठा दिया गया। भुरिया झटपट पिंजड़े में घुस कर एक कोने में दुबक बैठा।

जब 'खूनी घोड़े' ने देखा कि उसका शत्रु भाग खड़ा हुआ, तब अपने विजय प्राप्त करने पर वह हिनहिनाने और मारे खुशी के टाप से जमीन खोदने लगा। तदुपरान्त वह टटुआनी की लाश की ओर गया और कुछ देर तक उसे सूंघतां रहा और फिर उसे लातों से कुचल कुचला कर ठाठर के चारों तरफ दौड़ने लगा—मानों वह बाहर खडे हुए आदमियों को पकड़ कर खा जाना चाहता है। इस समय इसका खून उबल रहा था, शेर हो वा मनुष्य किसी का भय उसे न था, जो सामने आता उसी पर वह आक्रमण करने को बफर रहा था।

थोड़ी देर उसके बफरने को देख कर बादशाह सलामत ने किसी हिन्दुस्तानी आदमी से कहा, 'दूसरा शेर छोड़ा जाय'। फिर हमलोगों से अङ्गरेजी में कहने लगे, 'खुदा इससे समझे, अब भुरिया का बदला इससे लेना पड़ा'। हमलोग ने हाथ बांध कर मुस्कराते हुए झुक कर बड़े शिष्टाचारी से कहा कि "ठीक यही कर्तव्य है" और फिर अदब के साथ दूसरा तमाशा देखने को हट कर खड़े हो गए।

बादशाह। "देखो जी, खूनी घोड़े ने कैसी भयङ्कर

लत्तियां मारी हैं"।

हम में से एक अङ्गरेज—"जी हुजूर, बड़ी ही भयानक लत्तियां थीं, भुरिया के मुंह पर जब उसकी दोलत्ती पड़ी थी, तब उसके आघात का शब्द तक मैंने सुना था"।

इतने में शेरों का रखवाला आगया और उसने निवेदन कराया कि यदि आज्ञा हो तो वह हाजिर हो। बादशाह ने आज्ञा दी कि 'अच्छा आने दो'। रखवाले ने आकर निवेदन किया कि 'जहांपनाह की उमर दराज़, अभी दो घंटे हुए कि शेरों को रातिब खिला दिया गया है, यदि आज्ञा हो तो जो सब से अच्छा शेर है, वह ठाठर में छोड़ा जाय"।

बादशाह। "पाजी कहीं का, दो घण्टे पहिले ही क्यों रातिब दे दिया?"

रखवाला। (सहम कर कांपता, थरथराता और झुक कर सलाम करता हुआ) 'खुदावन्द, रातिब खिलाने का नित्य का वही समय था'।

बादशाह। "यदि शेर ने आक्रमण न किया, तो बचा तुम्हीं को ठाठर में जाकर 'खूनी घोड़े' से लड़ना पड़ेगा"।

थोड़ी देर के उपरान्त एक पिंजड़ा लाया गया, लोग उस शेर को ध्यान से देखने लगे। शेर का रखवाला मारे फिक्र के मरा जाता था। वह बड़ा डर रहा था, क्योंकि वह जानता था कि जो बात बादशाह के मुंह से निकली वह पूरी बिना हुए नहीं रह सकती चाहे कुछ हो।

भुरिया का पिंजड़ा जब हटा दिया गया तब शराब मङ्गाई गई और हमलोग शराब पीने लगे। यह शराब बरफ में

रक्खी रहने से शीतल होगई थी, इसके पीने से चित्त शीतल होगया, क्योंकि वहां गर्मी बहुत थी और विशेष करके हम अङ्गरेजों का गर्मी के मारे बुरा हाल था। बादशाह सलामत की सहेलियां पीछे परा जमाए और हाथों में मोर की पंखडियां लिए बादशाह को बराबर झल रही थीं। अपने गोरे२ कलाइयों को, जिनमें जड़ाऊ कङ्गन पड़े थे, और गोल २ भुजाओं को जिन पर भुजबन्द और नौरतन बंधे थे, बड़े हाव भाव और मनोहर मरोर के साथ, हिलाती हुई इस प्रकार हवा कर रही थीं कि बादशाह के देखने में आड़ नहीं पड़ती थी।

शेर का पिंजड़ा लाकर ठाठर के फाटक पर लगा दिया गया, दोनों के दर्वाजे खोल दिए गए। शेर धीमे से उठा और उसने ठाठर के चारों ओर देखा, फिर वह दर्वाजे पर आकर ठिठक रहा, मानों वह आगे बढ़ने से झिझकता है। जब उसको एक बरछी की नोक पीछे से चुभोई गई, तब उसकी झिझक जाती रही और वह अहाते में निकल कर घूमने लगा। पिंजड़े और ठाठर के फाटक बन्द कर दिए गए। अब वह घोड़े को सुस्थिरता के साथ देखने लगा। थोड़ी देर वह घोड़े को घूरता रहा और घोड़ा भी अपना मुंह शेर की ओर किए हुए खड़ा था। कुछ देर देख भाल कर शेर टटुई की लाश के पास चला गया और जो कुछ दो चार बूंद लहू उसमें शेष रह गया था, उसे चाटने लगा और फिर घोड़े की ओर देखने लगा, जो उसी आन बान से अपने बचाव के दांव पर डटा खड़ा था।

यह शेर भुरिया से बड़ा था, परन्तु इसके खाल की धारियां उतनी सुन्दर न थीं। भुरिया की चाल ढाल बहुत ही सुबुक

और सोहावनी थी, जो इसमें न थी। वास्तव में यह एक सामान्य शेर देख पड़ता था, इसके पुट्ठे मोटे और भारी थे और इसकी खाल मोटाई से लटपटाती थी। कदाचित पेट भरे होने के कारण वह ऐसा लद्धड़ होगया था, यदि भूखा होता, तो स्यात् भुरिया के समान इसमें भी फुरतीला और गठीलापन आ जाता।

'खूनी घोड़ा' ठाठर के फाटक के सामने जिधर से कि यह शेर आया था, अपने बचाव की ताक में, बड़े ताव से खड़ा था (जैसा ऊपर लिखा जा चुका है), परन्तु शेर चकपकाया हुआ मालूम देता था, मानों उसके समझ ही में नहीं आया था कि वह यहां क्यों लाया गया है। यद्यपि वह टट्टुई की लाश को छाप बैठा, तो भी होशियार सिपाही के समान वह अपनी टकटकी अपने मित्र 'खूनी घोड़े' की ओरही जमाये हुए था। अब वह लगा लाश की चीर फाड़ करने और अपने पञ्जे, जबड़े और अङ्ग के बल को प्रगट करने, यदि 'खूनी घोड़ा' अपनी अवस्था पर ध्यान देता, तो अवश्यही घबड़ा कर कांप उठता।

बादशाह ने गुस्से से चिल्ला कर कहा, "लाश हटाव, तुम लोगों की बड़ी मूर्खता है, जो उसे अबतक वहीं पड़े रहनेदिया।"

उसी दम आज्ञा का पालन होने लगा, दो एक तपाए हुए लाल २ लोहे के छड़ लाकर शेर को वहां से हटाया। टट्टुई की गरदन में फन्दा डाल कर लाश बाहर खींच ली गई। इस छेड़ छाड़ से शेर झुंझला गया और ठाठर के बीच में आकर पड़ रहा और बाहर के आदमियों को देख कर गुर्राने लगा, कभी वह आदमियों को और कभी घोड़े को देखता।

दूसरा शेर और 'नृभक्षक' घोड़ा।

शेर ऐसी जगह जाकर बैठा कि वहां तक लोहे के छड़ों का पहुंचना कठिन था। तपे हुए छड़ों से उसे उठाने के प्रयत्न किये गये, परन्तु सब निष्फल हुए, क्योंकि छड़ छोटे थे। अन्त को हार कर एक बड़ा लम्बा बरछा शेर को गोदा गया। झुंझला कर वह उठा और बरछे को पकड़ कर उसी सीध में ठाठर पर झपट पड़ा और बांस पकड़ कर ज़ोर २ से झिंझोरने और हिलाने लगा। उसका इस प्रकार ठाठर को झिंझोरना बड़े भय की बात थी। यदि वह ठाठर तोड़ कर बाहर निकल आता, तो बड़ी विपत्ति होती। परन्तु लोगों ने गर्म २ तपे छड़ों द्वारा उसे वहां से शीघ्रही हटा दिया। वह बफरता और गरजता हुआ वहां से चल दिया और इसने ठाठर के दो तीन चक्कर लगाए। घोड़ा भी बराबर अपनी दृष्टि इस पर जमाए साथ २ चकफेरी लगाता रहा। लोगों ने बहुत कुछ प्रयत्न किये कि किसी प्रकार वह घोड़े पर आक्रमण करे, परन्तु उनकी कुछ न चली। लोग उसे गरम २ छड़ों से दागते, जलाते और बरछे गड़ाते थे, सारांश यह कि हर तरह से क्रोध दिलाते थे, पर जब देखो तब वह अपना गुस्सा बांस के ठाठर परही उतारता था और मुंह बाए बड़े २ विकराल दांत देखाता हुआ आदमियों के ही ओर झपट पड़ता था। किसी भांति से भी वह घोड़े पर आक्रमण करने का साहस नहीं करता था और घोड़ा भी उससे चल कर छेड़खानी करना नहीं चाहता था।

जब लोग सब तरह से हार गए, तब मुझे यह डर लगा कि कहीं 'शेर का रखवाला' ही ठाठर में न भेजा जाय, परन्तु बादशाह सलामत उस बात को भूल गए थे और चिल्ला कर

कहने लगे कि "घोड़ा तो बड़ा शूरवीर मालूम होता है। अच्छा शेर को हटाओ और तीन अरने भैंसे लाओ, देखो उनसे यह क्या करता है"।

जङ्गली भैंसे यद्यपि भारी भरकम और भद्देसल होते हैं, पर जब ये गुस्से में आते हैं, तब इनसे बढ़ कर क्रूर कोई भी पशु नहीं होता। कई बेर मैंने अपनी आंखों देखा है कि ये बड़े भारी २ हाथी को मार सींग मार सींग भगा देते हैं।

पिंजड़े की खिड़की खोल कर ठाठर का दरवाजा उठा दिया गया और शेर ऐसी फुरती से पिंजड़े में चला गया कि इसके एक अंश की भी फुरती निकलती समय उसने नहीं की थी। इसके पश्चात् कुछ देर तक शराब लुंढा की। जब भैंसे आए, तब एक एक करके तीन बेढ़ंगम और देखने में थोथल भैंसे ठाठर के अन्दर हांक दिए गए। ये भैंसे टकटकी बांधे इधर उधर भारी २ सिर और सींगों को निष्प्रयोजन ही हिलाते और झटकारते ठाठर के बीच में जाने लगे।

ज्यों ज्यों भैंसे आगे बढ़ते जाते थे, त्यों त्यों 'खूनी घोड़ा' भी पीछे हटता जाता था। इनका प्रकाण्ड डील डौल देख कर घोड़ा चकरा गया। पहले शेर से संघातिक युद्ध कर चुकने पर जब दूसरा शेर आया था, तब भी वह इतना नहीं घबड़ाया, जितना इन कुरूप और विकट पशुओं के चौड़े सपाट माथे, मोटे और भारी सींगों और काले २ ढुलमुल और बेढंगे शरीर को देख कर वह व्याकुल हुआ। फुंकारता और हिनहिनाता हुआ कदम २ वह पीछे हटने लगा, परन्तु उसकी यह फुफकार डर की थी। भैंसे निर्भय उसकी ओर दर्राये बढ़े जा रहे थे, यदि

घोड़ा तनिक भी उनमें डर का चिन्ह देखता, तो वह अवश्य उनपर झपट पड़ता।

ये बनैले भैंसे मिले जुले साथही साथ अपनी सींगों को इधर उधर फटकारते थे, कभी वे भूमि पर फुंकार मारते, कभी ठाठर के बाहर के आदमियों की ओर देखते, कभी कोठे पर दृष्टि दौड़ाते और कभी घोड़े से आंख लड़ाते थे, मानों वे हमारी ओर देखकर पूछा चाहते हैं कि वे किस काम के लिए यहां लाए गए हैं। घोड़े पर धावा करने का विचार उनके मस्तिष्क में उत्पन्न ही नहीं होता था। इनको बौखलाये और अस्थिर देखकर घोड़े ने ढाढ़स बांधा। पहिले तो वह टापों से जमीन कुरेदने और नाक फुला कर फुंफकार मारने लगा। फिर वह एक एक कदम आगे बढ़ता, फिर नथने फुला कर फुंकार मारता। इसी प्रकार धीरे २ एक एक इंच बढ़ता उनके निकट आगया, भैंसे भी इसके आने पर कुछ ध्यान न देते थे और सिर हिलाते मिले जुले बढ़ रहे थे। घोड़ा भी धीरे २ आगे बढ़ताही जाता था, यहां तक कि घोड़े का मुंह आगे बढ़े हुए एक भैंसे के सिर से छूगया और वह हिनहिना कर, फुंफकार कर और गर्दन बढ़ा कर सूंघने लगा, तो भी उस भैंसे ने परवाह न की। एक पुरानी कहावत है कि "बहुत मिठास में कीड़े पड़ते हैं," यहां तो वह कहावत ठीक २ उतरी, क्योंकि जब घोड़ा हिनहिना २ कर उन्हें सूंघ चुका, तब वह दो एक कदम और निकट आकर एक दम घूम पड़ा और उसने पास के भैंसे की पसलियों पर अपनी नालदार टापों से कस कर एक दुलत्ती मारी। यह मार ऐसी अचानक, हठात और भयानक थी कि बिचारा भैंसा थोड़ी देर के लिये

अचेत सा होगया और इसके साथी कुछ इस प्रकार झूम झूम कर सिर हिलाने लगे, मानों वह झूम २ कर कह रहे हैं कि "वाह वाह, शाबाश ।"

भैंसों की बौखलाहट देखकर बादशाह सलामत खिल-खिला कर खूबही हँसे और कहने लगे कि "अब तो 'खूनी घोड़ा' क्षमा के योग्य है, उसकी जानबख्शी होनी चाहिये, अच्छा उसे हटा लो ।"

उसी दम आज्ञा पालन की गई । होशियारी से फन्दे डाल कर घोड़ा पकड़ा गया और अस्तबल में भेज दिया गया, यह विजयी घोड़े का शेष जीवन बड़े सुख और मान के साथ कटा।

बादशाह ने उसी समय कहा कि "इसके लिये लोहे का पिंजड़ा बनवाऊंगा और इसका पालन पोषण कराऊंगा, अब्बा जान के सिर की कसम यह घोड़ा बड़ाही बहादुर है ।"

इस घोड़े के लिए एक लोहे का पिंजड़ा इतना बड़ा बन-वाया गया, जो लण्डन के साधारण खाने की कोठरी से दुगुना बड़ा था, इसमें घोड़ा चारों ओर टहला करता था और जो लोग उसे देखने आते, उन पर वह दांत निकाल कर झपट पड़ता और कभी २ पिंजड़े के छड़ों पर भी उसी ढङ्ग से लत्ती झाड़ता, जैसी लत्ती चला कर उसने भैंसों पर विजय प्राप्त की थी ।

जब मैंने लखनऊ छोड़ा, तब तक वह जीता था और लखनऊ में वह एक अद्भुत तमाशा था ॥

आठवां अध्याय।

"राजा योगी अगिन जल इनकी उलटी रीति"

बादशाह की निष्ठुरता और राजा बख़्तावरसिंह।

लखनऊ के हिन्दुस्तानी दर्बारियों में नाम मात्र के सैनिक जनरैल, राजा बख़्तावरसिंह से बढ़ कर बादशाह का मुंहलगा और कोई न था। मैंने इन्हें नाम मात्र का सैनिक जनरैल इस कारण से लिखा है कि अवध में यदि किसी काम की सेना थी कि जिसका प्रजा भय मानती हो, तो वह केवल कम्पनी बहादुर की फौज थी। बादशाह के यहां भी सवार और पैदलों की सेना थी, जिनकी वर्दी कुछ तो फारसी सेना के समान थी और कुछ कम्पनी की फौज के सदृश थी! एवं सवार, पैदल, तोपखाना इत्यादि सब मिला कर शाही सेना ४० वा ५० हजार होगी। इस सेना का कमांडर-इनचीफ़ (सेनापति) नवाब वज़ीर का बेटा था और जनरैल राजा बख़्तावरसिंह थे। हमलोग और हिन्दुस्तामी दर्बारी लोग भी राजा बखतावरसिंह को सर्वदा जनरल ही कह कर पुकारा करते थे, कदाचित ही कोई उनका नाम लेकर बुलाता हो। बादशाह साहब को हँसी दिल्लगी और बालकों की सी चुहुलबाजी में विशेष अनुराग था और बख़्तावरसिंह तथा नापित में खूब ही फक्कड़बाजी हुआ करती थीं। यदि कोई अनजान मनुष्य इनको इस समय देखता, तो वह यही समझता कि स्कूली लड़के थोड़ी देर के लिये छुट्टी पाकर एकत्रित हुए हैं और आपस में दिल्लगी कर रहे हैं। नीचातिनीच भाण्डपन और हास्यपूर्ण ठट्ठे बादशाह

के सम्मुख आपस में हुआ करते थे और बादशाह सलामत बैठे उनको बढ़ावा देते रहते थे। हिन्दुस्तानियों में राजा बख़तावर-सिंह और अङ्गरेजों में नापित इन दोनों की जोड़ तोड़ सब से बढ़ कर हुआ करती थी।

राजा बख़तावरसिंह कोई मूर्ख वा अल्प बुद्धि के मनुष्य न थे, किन्तु इनको अपने प्रताप तथा पद का अभिमान भी पूर्णतया था। उनसे जहां तक हो सकता वे अपने मान और मर्यादा को बनाए रखने की भी चेष्टा करते थे, और हँसी ठट्ठा और फक्कड़पन भी चतुराई के साथ किया करते थे, क्योंकि इस छिछोरेपने से बादशाह सलामत प्रसन्न होते थे। निकृष्टाचार, व्यवहार होने पर भी किसी २ मनुष्य में आन्तरिक विवेक और बुद्धिबल हुआ करते हैं। हिन्दुस्तानियों में इनकी बड़ी मान मर्यादा थी और प्रायः लोग इन्हें राजकाज और लोकव्यवहार में अति निपुण मानते थे। सभी लोग इन्हें जनरेल २ कहा करते थे, परन्तु वास्तव में इन्हें पुलिस का बड़ा अफसर कहना ही उचित था, क्योंकि इनके सिपाहियों से वही सब काम लिए जाते थे, जो इङ्गलिस्तान में पुलिस से लिए जाया करते हैं। जैसे दरबारी उमरा के अरदली में रहना, बादशाह की सवारी के जलूस में चलना इत्यादि इत्यादि।

ऊपर लिखी बातों से आप लोगों को स्पष्ट मालूम होगया होगा कि हिन्दुस्तानी दरबारियों में राजा बख़तावरसिंह का बड़ा दौर दौरा था।

यह पुरुष एक लक्ष्मीवान्, मुख्याधिकारी, बादशाह के मुंह लगे मित्र तथा एक उत्तम राजपूतकुलोत्पन्न थे, इन्हीं कारणों से

इनकी मान, मर्यादा, प्रताप और प्रभुत्व सभी अधिकहो रहे थे। इनके प्रभाव और प्रताप को देख नवाब-वजीर अपने जी ही जी में कुढ़े जाते थे, परन्तु यावत् जहांपनाह की कृपादृष्टि और राजनापित की मैत्री बनी रही, तावत् इन्हें नवाब वजीर की कुछ भी परवाह न थी। अस्तु प्रत्यक्ष में तो वे एक दूसरे के परम मित्र बने रहते थे। बख़्तावरसिंह और नवाब जब आपस में मिलते, तब बड़े प्रेम से मिला करते, झुक २ कर परस्पर सलामें किया करते, एक दूसरे की बगल में बराबर बैठते और आपस में एक दूसरे की शुश्रुषा और प्रशंसा किया करतेथे। फिर भी नवाब-वजीर मुसलमानही थे और जनरैल साहब हिन्दू ही थे।

लखनऊ में बादशाह की अनेक कोठियां थीं, उनमें से एक कोठी में एक दिन बैठे हमलोग शिकार और पशुयुद्ध के तमाशे देख रहे थे। एवं पशुओं की लड़ाई, चीर फाड़, हार जीत, झपटा झपटी, भागाभाग देखते २ ऊब गए और हमलोग एक दूसरेकमरे में, जो ठीक रमने के सामने बना हुआ था, जा बैठे। तमाशे देखते २ जी घबरा उठा था, इसलिये हम सभोंने अपने मन प्रफुल्लित करने के लिये दो एक घूंट बरफ से ठंडी की हुई शराब से अपने गले हरे किये और दो एक बिस्कुट खाये। बादशाह सलामत भी प्रसन्न मन बैठे खिलखिला रहे थे और बख़्तावरसिंह भी चुहलबाजी में दत्तचित्त होकर हँसते हँसाते और जापनाह का जी बहलाने में तत्पर थे।

अब वहां से उठने का वक्त आ चुका था, क्योंकि रात्रि के ब्यालू का समय समीप आ रहा था, यद्यपि अभी कुछ दिन का

शेष था। जलूस के सवारों और चोबदारों की पुकार हो चुकी थी, बाडी-गार्ड के कमान ने सबको एकत्रित कर लिया था और इसकी सूचना भी आ चुकी थी। बादशाह सलामत मेज़ पर से उठे, ये इस समय अङ्गरेजी कपड़े पहिने थे और अपनी अङ्गरेजी टोपी के अन्दर हाथ डाले उसे नचा रहे थे, कभी २ ऊंचा हाथ करके भी अपनी टोपी को चक्कर दे दिया करते थे। यहां तक तो सब बातें ठीक २ थीं, कोई बात गड़बड़ की नहीं पाई जाती थी। इसी भांति हँसते खेलते हमलोग कई बेर पहले भी रह चुके थे। बादशाह की सर्वदा से यह एक आदत थी कि जब वे अपनी मौज में रहते, तो प्रायः अपनी अङ्गरेजी टोपी को अपनी उङ्गली पर नचाया करते थे। बादशाह आगे आगे जा रहे थे और उनसे दो तीन ही कदम पीछे मेरे ही साथ २ राजा बख़तावरसिंह भी चले जाते थे। हमलोग मिले जुले (बादशाह की यही आज्ञा थी कि ऐसे अवसरों में आगे पीछे पर ध्यान न दिया जाय, किन्तु समान ही भाव बरता जाय) द्वार तक पहुंच चुके थे।

सब लोग चुपचाप चले जा रहे थे कि टोपी नचाते नचाते बादशाह की उङ्गली उसमें घुस कर बाहर की ओर निकल पड़ी। यद्यपि बादशाह विशेष कर उत्तमोत्तम वस्त्र धारण किया करते थे, तथापि यह टोपी स्यात सामान्य ही बाजारू रही हो, अथवा विशेष नचाने से उसके भीतर का वस्त्र रगड़ से घिस कर फट गया हो। चाहे जो कारण हो, बादशाह की उङ्गली उसके पार हो गई, इस पर वे हँस पड़े और हमलोगों की ओर देखने लगे कि जिसमें हम सब भी हँस दें। हम सब तो इसी

लिए थे हों, अपना कर्त्तव्य जान कुछ मुसकरा दिए। कहीं भावी वश हँसी २ में बख़तावरसिंह के मुंह से निकल पड़ा, "हुज़ूर के ताज में छेद।"

बस हँसी हँसी में इतनीही बात बेसमझे बूझे उनके मुंह से हठात निकल पड़ी। इतना कहना था कि दुर्भाग्यवश बादशाह को यह बात बहुत बुरी लगी, क्योंकि उनके पिता और वंशज लोग इनके राज्य पाने के विरोधी थे और वे चाहते थे कि इन्हे राजगद्दी न मिले, क्योंकि इन्हीं के भाई को वे लोग गद्दी पर बैठाना चाहते थे, अतः राजगद्दी और तत्सम्बन्धीं ताज के विषय में किसी प्रकार का कुवाच्य यह नहीं सह सकते थे। यदि कम्पनी बहादुर और रेजीडेंट इनके मध्यस्थ न होते, तो इन्हें कदापि यह गद्दी प्राप्त न होती। यही हँसी की बात, यदि किसी अन्यान्य अवसर पर, अथवा किसी भिन्न रीति से,कही जाती, तो बादशाह कभी उससे बुरा न मानते। परन्तु "होनहार नहिं मिटे, करे कोई लाखों चतुराई।"

बस बादशाह के कान में इन शब्दों का पड़ना था कि उन का तेवर बदल गया, चेहरा लाल हो गया। इसी के क्षण मात्र पूर्व इनके मुखारविन्द से जो प्रसन्नता के मेघ वर्ष रहे थे,वे सब आंधी में उड़ कर अदृश्य हो गए, मारे रोष और क्रोध के मुंह झँवरा गया और दोनों नेत्र रक्तवर्ण हो गए। इस समय मैंही उनके समीप था, उन नीली पीली आंखों से मेरी ओर देख कर वे बोले,"इस विश्वासघाती और कृतिघ्न की बातें तुमने सुनीं?" बादशाह का यह स्वभाव था कि जब प्रसन्न होते तब भी असीम और जो क्रोध करते तो उसका भी अन्त न लगता।

मैंने उत्तर दिया, "जी हुज़ूर......।" मैं इतना ही कहने पाया था कि बादशाह ने बाडीगार्ड के कप्तान को बुला कर कहा—"इसे बांध कर अभी पहरे में करो।" फिर रौशनुद्दौला नवाब-वजीर की ओर देख कर बोले, "रौशन! जाओ इसका सिर हनवा दो।"

हा! यह कैसा त्रास का समय था! बादशाह को इस बात का पूरा अधिकार था कि कम्पनी के नौकरों के अतिरिक्त अपनी प्रजा को जैसे चाहें प्राणदण्ड दें, इसमें कोई रोक टोक न कर सकता था। इनका यह भी स्वभाव था कि यदि कोई उनका क्रोध शान्त करना चाहता, तो वह और भी बढ़ जाता था। बाडीगार्ड का कप्तान (जो एक अङ्गरेज था) और नवाब-वजीर दोनों के दोनों बख़्तावरसिंह की ओर बढ़े, जो सिर झुकाए हाथ पर हाथ धरे चुपचाप सन्नाटे में खड़ा था और एक शब्द भी उसने मुंह से न निकाला।

उसके समीप जाकर नवाब-वजीर ने कहा, "जहांपनाह की आज्ञापालन करना हमारा और तुम्हारा कर्तव्य है।" नवाब-वजीर यद्यपि देखने में तो मित्र बना हुआ था, तथापि इस कार्य के करने में उसे कुछ भी संकोच न हुआ।

देशी रियासतों में जहां के राजा स्वतंत्र और नियमरहित हैं, वहां के दरबारियों के बिगड़ने और बनने का अवसर नित्य ही हुआ करता है, अतः दरबारियों को ऐसे घटनाओं के देखने में विस्समय वा हर्ष नहीं होता और वे इसे एक राज्य व्यवहार मात्र समझा करते हैं। 'बातों हाथी पाइयां, बातों हाथीपांव,' यह कहावत स्वच्छन्द राजदबार के लिये बहुत ठीक कही गई है।

तदनन्तर कप्तान बोला, "बख़्तावरसिंह मेरा कैदी है" और वह उसका हाथ पकड़ कर ले चला। चलती समय कप्तान हमलोगों की ओर ऐसी दृष्टि से ताका कि जिससे यह आशय निकलता था--"इस बिचारे के बचाने के लिये जहां तक बन पड़े, हमलोग कुछ करें और जहांतक हो सकेगा वह भी इसका उद्योग करेगा।"

जब बख़्तावरसिंह सामने से चला गया,तब बादशाह ने क्रोध में आ अपनी टोपी पृथ्वी पर पटक दी और उसे लातों से कुचल डाला। अब तक इनका क्रोध प्रज्वलित अग्नि के समान भड़क रहा था। जो कुछ मैं लिख गया हूं यह एक क्षण मात्र का कृत्य था।

फिर अपनी नीली पीली आंखों से मेरी ओर देख कर बादशाह पूछने लगे, "अगर इङ्गलिस्तान के बादशाह से कोई इस प्रकार कुभाषा बोलता, तो वह क्या करते?" यों पूछते जाते थे और क्रोध से भरे पृथ्वी पर अपने पैर पटकते जाते थे।

मैंने निवेदन किया, "वे भी इसी तरह उसे गिरफ़ार करवा कर भिजवा देते,जैसे हुजूर ने किया है और फिर तह-क़ीकात करने के पश्चात् जैसा उचित समझा जाता, उसे सजा दी जाती।"

बादशाह। (द्वार तक पहुंचते २ अपनी पहिली आज्ञा भूल कर) "मैं भी ऐसाही करूंगा।"

मैंने झुक कर सलाम किया और पूछा, "हुजूर के आज्ञा की सूचना रैशनुद्दौला को दे दूं?" इतना कह कर मैं आगे को लपक गया।

वे लोग घोड़ों पर सवार होकर जा ही रहे थे, आगे आगे कप्तान साहब, उनके पीछे दो सवारों के मध्य में बख़्तावरसिंह और सब के पीछे रोशनुद्दौला था। मैंने कुछ दूरही से पुकार कर बादशाह की पिछली आज्ञा उन्हें सुना दी। मेरे इस सूचना देने पर, यद्यपि रोशनुद्दौला जी से तो कुछ कुढ़ गया, तथापि लोगों को सुनाने के लिये यों बोला-"जहांपनाह से क्षमा ही की आशा थी।" इधर उधर अनेक लोग खड़े थे, उन सभों को सुनाने ही मात्र के लिये रोशनुद्दौला ने इतना कहा। बख़्तावरसिंह ने भी मेरा सन्देसा सुन और समझ लिया होगा, क्योंकि मैंने हिन्दी ही भाषा में जोर से पुकार कर कहा था कि जिसमें वह भी भली भांति सुन ले, परन्तु उसने घूम कर देखा तक भी नहीं। दरबारी लोग प्रायः ऐसी बातों का बड़ा ही बचाव रखते और सब तरह से सावधान रहा करते हैं।

बादशाह सलामत जब हाथी पर सवार होने लगे, तब अपने मित्र नापित से बोले,-"बख़्तावरसिंह को जरूर प्राण दण्ड की सजा दी जायगी।" भला फिर किसकी सामर्थ्य थी जो कहता कि ऐसा न होना चाहिये। हमलोगों (अङ्गरेज अनुचरों) को विश्वास था कि यदि रेजिडेण्ट साहब चाहेंगे, तो उस दीन की जान बच जायगी, उसकी जायदाद चाहे न बचे।

इस रमने से, जहां की यह घटना है, गोमती तक कुछ ही मीलों की दूरी है। हमारे घोड़े, हाथी आदि एक नाव के पुल पर से जो बड़ा पटैला सा था, पार होकर लखनऊ पहुंच गए। यह पुल प्रायः बादशाह की सवारी ही के उतरने के हेतु बनाया गया था, जो इस किनारे वा उस किनारे लगा रहता था। यह

पटैला देखने में तो भद्दा सा था, परन्तु बादशाह केही जाने के लिये था, इस हेतु इसकी बड़ी प्रतिष्ठा थी। सामान्य लोगों के लिये एक दूसरा पुल बँधा रहता था। यह भी देखने में बड़ा भद्दा था, परन्तु लोगों को उस पर से आने जाने में बड़ा सुबीता रहता था, केवल मध्यान्ह में उसके बीच के दो एक डोंगे घंटे दो घंटे के लिये हटा दिये जाते थे, जिसमें व्यापारियों के माल की जाने आने वाली नावें निकल जाया करें।

महल में पहुंच कर बादशाह शान्त होगए और उनका वह क्रोध धीमा पड़ गया। हमलोगों कीं जी से लगी थी कि देखें बख्तावरसिंह के विषय में अब बादशाह क्या करते हैं? हमलोगों से न रहा गया और चलती समय एक प्रभावशाली अनुचर ने अवसर पाकर यही बात छेड़ही तो दी।

बादशाह बोले, "जब तक बखूबी तहकीकात न हो लेगी, तब तक उसको प्राणदण्ड न दिया जायगा।"

इतना सुनतेही हमलोगों को कुछ ढारस बँध गई, पर तौ भी हमलोगों को इस बात का बड़ाही भय था कि हमलोगों के चले जाने पर बादशाह के हिन्दुस्थानी सेवक न जाने उनके कानों में क्या भरदें। क्योंकि जब कभी किसी धनिक और सम्मानित व्यक्ति का झगड़ा आपड़ता, तो ये लोग प्रायः प्राण बध वा धन हरण केही दण्ड की अनुमति दिया करते थे। इसमें भी बहुत कुछ धन और सामग्री हरण होने की आशा थी, अतः ये सब भी अपने हाथ रंगने के प्रत्याशी हो रहे थे। इसलिये केवल कप्तान साहबही की योग्यता ऐसी समझी गई कि वे जाकर रेजिडेण्ट साहब को इसकी सूचना दें, यद्यपि रेज़िडेण्ट साहब

भी विवश थे, क्योंकि उनको इस विषय में न तो कोई अधिकारही था और न कोई ऐसा मार्गही सूझता था कि वे इस बीच में पड़ सकें। इस झगड़े में एक राज्य सेवक पर राज विद्रोह का दूषण लगाया गया था, अतः कम्पनी इस विषय में कुछ रोक टोक नहीं कर सकती थी। जो हो, पर रेज़िडेण्ट साहब इस मध्य में अपना बोलना उचित नहीं समझते थे।

घर लौटने के समय हमलोग अभागे बखतावरसिंह से मिलने के लिये गए। वह महल के समीपही एक सड़ी सी कोठरी में रक्खा गया था, जिसमें पहिले एक नीच जाति का सेवक रहता था। दो हिन्दुस्तानी सन्तरियों का उसपर पहरा था। ऐसे बड़े और मान्य व्यक्ति का ऐसे नीच गृह में रक्खा जानाही कैसा भारी दण्ड है? जब हमलोग वहां पहुंचे तब हमने उस दीन और दुखिया की ऐसी शोचनीय और शोकमय दशा देखी कि बस 'त्राहि! त्राहि!' कुछ वर्णन के योग्य न थी।

उस कोठरी में एक खुरहरी और २ छोटे पावों की घटिया सी खटिया बिछी हुई थी। इसपर कोई बिस्तरा क्या कि एक चटाई तक भी न बिछी थी। हमलोगों ने सुना कि यह सब बादशाह कीही आज्ञानुसार किया गया है और नवाब-वज़ीर ने कप्तान साहब को ऐसी ही आज्ञा दी है। इस अपमानित रईस सबकी वस्तुएं उतरवा लीगई थीं। इसकी पगड़ी, ढाल, तलवार, पेटी शाली रूमाल, जामा इत्यादि सभी छीन लिये गए थे। यह बिचारा केवल एक धोती पहिने हुए एक दीन सेवक के नाईं उस चुभनेवाल खाट पर नग्न देह से पड़ा था।

जब हमलोगों ने उससे बातचीत की, तब वह बोला, 'जो

कुछ मैंने कहा था वह केवल हँसी ठट्ठे में कह दिया था, बिना कुछ आगा पीछा सोचे बिचारे मेरे मुंह से वह बात निकल पड़ी। बादशाह सलामत इस बात को भी भलीभांति जानते हैं कि जब उनके मान्यवर पिता और कुटुम्ब के लोगों ने उनके राज गद्दी होने पर विरोध किया था, तब भी मैं न तो उनका साथी था और न मैंने उस विषय में कोई सम्मति ही दी थी। साहबो! मुझे तो मरना ही बदा है और अब मेरी जान अवश्य ही जायगी, क्योंकि रौशनुद्दौला मेरा शुभचिंतक नहीं है, परन्तु आप लोगों से मेरी प्रार्थना है कि आप मेरे कुटुम्ब तथा वंश को अपमानित होने से बचावें। यदि आप लोग रेजिडेण्ड साहब से निवेदन कर प्रार्थना पूर्वक कहेंगे तो वे अवश्य उन्हें इस आपत्ति से बचा लेंगे। मैं मर्द हूं, मैं सब दुःख को सह लूंगा, मृत्यु का कष्ट भी झेल लूंगा, पर—हाय! मेरी स्त्री, बच्चे और वृद्ध पिता जी की, जो बिस्तरे पर से उठ बैठ भी नहीं सकते, क्या दशा होगी? हा! मेरी स्त्री, जिसने अपने कुटुम्बी जनों के सिवाय किसी परपुरुष का मुखावलोकन भी अबतक नहीं किया—मेरे बच्चे, जो अभी तक अज्ञान बालक हैं—मेरे मान्यवर वृद्ध पिता जो पूरे असमर्थ हैं—इन सभों की मेरे मरने के पश्चात् क्या गति होगी और ये सब क्या करेंगे? इसी चिन्ता से मेरा हृदय व्यग्र हो रहा है। हे मेरे दयालू और करुणाशील साहबो! आप लोग कृपा कर मुझे इतना वचन दीजिये कि इन निर-पराधियों की रक्षा में आप लोग अवश्य ही उद्योग करेंगे।"

उसके ऐसे करुणात्मक वचन सुन हमलोगों ने उसे पूर्णतया विश्वास दिलाया कि निःसन्देह जो कुछ हमलोगों से होना

२०

संभव है उसे हम उठा न रक्खेंगे। सन्ताप और खेद के कारण जितने शब्द उसके मुख से निकलते थे, सभी करुणा से भरे होते थे। हा! यह भी कैसा हृदयविदारक दृश्य था? यद्यपि देशी राज्यों के छिछोरपन, निष्ठुरता और अन्याययुक्त कार्य्यों को देखते २ हमलोगों के हृदय बज्रवत् दृढ़ हो गये थे, तथापि इस दीन की करुणामय वाणी सुन कर हमारे आंसू टपक पड़े और रोमांच होआया।

वह पुनः कहने लगा, "सब तो छिन गया, अब मेरे पास यह एक रत्न मात्र शेष रहगया है।" यह एक अनमोल पन्ने की अँगूठी थी, जिसे वह सर्वदा अपनी उँगली में पहिने रहता था। इस अँगूठी को उतार उसने हममें से एक सप्रतिष्ठ अङ्गरेज अनुचर के हाथ में पहना दिया और कहा, "यदि मेरे वंशज धन हीन होजायँ, मेरा संपूर्ण धन हर लिया जाय और किसी प्रकार से उनके प्राण बच जायं, तो उनके खाने पीने के लिए इसे बेच डालना। परन्तु हे कृपासिन्धु! मेरी फिर भी यही प्रार्थना है कि यथासाध्य उन निरपराधी और निरावलम्ब जनों की अपमान और दुर्दशा से रक्षा करने में आप लोग उद्यम करना, वे सब आपको हृदय से धन्यवाद देंगे और आशीर्वाद करेंगे।"

हमलोग उसके समीप चिरकाल तक नहीं ठहर सकते थे। हमलोगों ने उसे सब तरह ढाढ़स दिलाई और कहा कि जहां तक हमारा वश है, हम अपने बचन पालन करने में कुछ भी उठा न रक्खेंगे। जब हमलोग बिदा हुए, तब वह संतोषयुक्त अपने जीवन से हाथ धोए हुए, चुपचाप बैठा था और अपने बचने को उसे जरा भर भी आशा नहीं थी। क्योंकि बादशाह की

आज्ञा वह अपने कानों स्वयं सुन चुका था और यह समझता था कि अब जो विलम्ब हो रहा है,वह केवल उसे सताने और यातना करने के अभिप्राय से है। वह मरने पर प्रस्तुत बैठा था और खेदित तथा पीड़ित हो सिर हिला हिला कर कहता था, "मैं बादशाह की प्रकृति को प्रायः आपलोगों से कुछ अधिक जानता हूं?" कारण यह कि इससे भी अल्प अपराधों पर अनेक व्यक्तियों को इससे भी कठोर दण्ड पाते वह अपनी आंखों से देख चुका था।

आज ही सन्ध्या के समय बखतावरसिंह के मामले का विचार होनेवाला था और तदनन्तर हमलोगों को बादशाह के साथ भोजन पर भी बैठना था। इस बीच में हमलोग अपने २ घर चले गए पर हमलोगों के मन उदास और शोचमय थे,तथा यही दृश्य आंखों के सामने घूम रहा था।

सन्ध्या समय हमलोग महल में गए, तो एक कमरे में कप्तान साहब से भेंट हुई और रेजिडेण्ट से मिल कर जो कुछ बातचीत हुई थी उसे उन्होंने हमलोगों को सुनाया और कहने लगे, "ईश्वर जाने इसका क्या परिणाम होना है। मैं तो ईश्वर से यही प्रार्थना करता हूं कि मैं इस काम पर न होता, किन्तु मुझसे कोई दूसरा काम लिया जाता, तो उत्तम था। आपलोगों ने कुछ और भी सुना?आज बखतावरसिंह का बूढ़ा बाप,बीबी और बच्चे सभी पकड़ कर उसी कोठरी में लाकर बैठाये गए हैं।" बादशाह के एक खवास से मालूम हुआ है कि अभी आध घंटे पीछे हमारी बुलाहट होगी। यह सुन हमलोगों ने आपस में सम्मति की कि अब चल कर उसके कुटुम्ब की भी दशा देख आवें।

और उसे ढाढ़स भी देआवें कि रेजिडेण्ट साहब अवश्य ही उन सभों को बचा लेंगे। इस समय हमलोगों का उस दुःखद स्थान पर जाकर उसको कुटुम्ब सहित देखना कौतुकार्थ न था, किन्तु उसपर करुणार्द्र होकर हम गए थे।

मैंने अपने जीवन के नाट्य पटल में अनेक हृदयवेधी घटनाएं देखीं, परन्तु ऐसा कोई दृश्य नहीं स्मरण आता कि जिसे देख कर मेरा हृदय इतना संतप्त हुआ हो, जितना इन अभागे स्त्री और बच्चों की दुर्दशा देख कर मेरा कलेजा फटा जा रहा था। इन सभों के साथ भी वही बर्ताव किया गया था, जो बखतावरसिंह के साथ किया गया था, अर्थात इनके भी वस्त्राभूषण उतरवा लिये गए थे और उन्हें केवल एक एक मोटी धोती पहिना दी गई थी। ये सब एक दूसरे से सटे और सिर झुकाये हुए मरने पर प्रस्तुत बैठे थे। उस बुड्ढे की यह अवस्था थी कि उसके संपूर्ण शरीर में झुर्रियां पड़ी थीं, हड्डी २ अलग निकली हुई थी और वह बिचारा बैठा बिलबिला कर रो रहा था। यह दीन बुड्ढा कुछ अपने मरने के शोच में नहीं रोता था, किन्तु अपने पुत्र और उसके स्त्रियों तथा सन्तानों के लिये फुक्के फाड़ कर बिलाप कर रहा था। युवा और कोमलांगी स्त्रियां, जो बड़े सुख से पली थीं, जिन्होंने परपुरुष के कभी मुख भी न देखे थे और न उन्हीं का मुख इसके पूर्व तक किसीने देखा था, वे सब वहां संकुचित तथा परस्पर सटी हुई, सिर झुकाये अपने बालकों को गोदी में लिये दबकी बैठी थीं और उजड्ड तिलङ्गे जो खड़े पहरा दे रहे थे, अथवा वहां बैठे थे, उनपर आवाजे कस कस कर उन्हें घूर रहे थे। एक स्त्री अपने बच्चे को छाती से

लगाये ऐसी बैठी थी, मानों इस आपत्तियों में भी वह मातृस्नेह का उदाहरण दरशा रही थी। एवं एक और स्त्री सिर झुकाये उदास चित्त और मलीनबदन और दुःखपूर्ण खली बैठी थी। इनके अङ्ग प्रत्यङ्ग का सुडाल सैंदर्य्य स्यात् किसी चित्रकार के हृदय में कभी ही उपजा होगा, इनका चम्पकवर्ण तथा गेहुंआं रङ्ग मन को हरण करे लेता था, और उनके भ्रमरवत काले और कुंचित केश दर्शकों के मन को लपेटे लेते थे। यद्यपि उन्होंने शोकाकुल हो जान बूझ कर अपने केशों को इस भांति छितरा दिये थे कि जिससे उनके मुख और स्कन्ध छिपे रहें, तथापि उनका सैंदर्य्य और भी बढ़ गया था।

जब इन विपद्ग्रस्तों को विदित हुआ कि हमलोग वख-तावरसिंह के मित्र हैं और उनको दिलासा देने आये हैं, तब उनका भय दूर हुआ, जो कि हमारे आने पर उन लोगों के जी में समा गया था और जिसके कारण से वे आपस में और भी चिमटी जाती थीं, और अब उनके हृदय में हमलोगों के गुणा-नुवाद का प्रादुर्भाव होने लगा। वे स्त्रियां और छोटे छोटे बच्चे हमारे पैरों पर गिर और रो रो कर गिड़गिड़ाते और उस राज्यापराधी की रक्षा के निमित्त हमसे दीन हो विनती करते थे। हमलोगों के आगे उनका भूमि पर गिर कर घिघियाना तथा भय और करुणा पूर्ण हो विलाप करना, यह एक ऐसा दुःखद दृश्य हमलोगों के नेत्रगोचर हुआ कि जिसे देख आप से आप कलेजा टुकड़े२ हुआ जाता था और उनपर अत्यन्तही करुणा उत्पन्न होती थी। ये सब अपनी रक्षार्थ नहीं रोते चिल्लाते थे, किन्तु उसी व्यक्ति की रक्षा चाहते थे, जिसके दैवात

एक बेसमझे बूझे शब्द कहने पर यह आपत्ति आई थी, जिस कारण वे सब भी विपत्ति में पड़ गए थे। सच तो यों है कि यदि भारतवर्ष की रक्षा हुई है वा हो सकती है, तो केवल यहां को स्त्रियों के सुचरित्र, पातिव्रत धर्म ही के प्रताप से, क्योंकि यहां की स्त्रियों से अधिकतर भूमण्डल भर में किसी सभ्य देश की स्त्रि जाति में भी इतना सुचरित्र, इतनी धर्म्मनिष्ठा, ऐसा पतिव्रत्य, यह कुलीनता, ऐसी निर्दोषता कदापि नहीं पाई जाती। योरोपवासीयों को प्रायः नीच जाति की स्त्रियों से व्यवहार करना पड़ता है और वे तद्वत् सभी को समझ लेते हैं, परन्तु उनका यह अनुमान वैसा ही भ्रम मूलक है, जैसे कोई विदेशी यात्री इङ्गलिस्तान की सड़कों पर गैस के प्रज्वलित प्रकाश में भड़कीले वस्त्र पहिने व्यभिचारिणी स्त्रियों को इधर उधर बिचरते देखकर वहां की सम्पूर्ण स्त्रियों को वैसाही जान ले।

हमलोगों ने उन दुःखित स्त्री, बालक और बुड्ढे की प्रार्थना को स्वीकार किया, तथा उनको संतोष और ढारस देकर विश्वास दिलाया। हमको कुछ धैर्य्य भी होगया था, क्योंकि रेज़िडेण्ट साहब ने नवाब वजीर को बुलवा भेजा था और यह भी कहला भेजा था कि यदि कोई दोषी है तो बखतावरसिंह है, उसके कुटुम्बियों ने क्या अपराध किया? उन सभों को प्राणदण्ड वा उनकी यातना करना सर्वथा अनुचित है, ऐसा कदापि न होना चाहिए। यद्यपि कम्पनी बहादुर बादशाह को किसीके प्राणदंड देने पर नहीं रोक सकती, तथापि निरपराधी स्त्री और बालकों को मरवा देने में कदापि अनुमति नहीं देती। इस बात

की यदि इंग्लिस्तान में खबर पहुंची, तो वे लोग क्या कहेंगे? यह कम्पनी के लिये एक बड़ी अपमान की बात होगी।

बखतावरसिंह के पास चिरकाल तक ठहरने का अवसर न था, क्योंकि यदि हमलोग बादशाह सलामत के समय पर हाजिर न होते और उनको यह ज्ञात होजाता कि हम सब राज्यविद्रोही के पास मिलने गए थे, तो उनके क्रोध की सीमा न रहती और वे हमसे भी बिगड़ जाते। अतएव हमलोग शीघ्रही महल को चल दिये कि वहां पहुंचकर इन लोगों की मुक्ति का कोई उपाय करें।

बखतावरसिंह के बालबच्चों के विषय में रेज़िडेण्ट साहब के पक्ष लेने से बखतावरसिंह के बच जाने की भी कुछ आशा होगई थी। रेजिडेंट साहब ने नवाब-वजीर से स्पष्ट कह दिया था कि यदि बखतावरसिंह के कुटुम्बियों का बालभी बांका हुआ, तो कम्पनी उन्हीं को इसका उत्तरदाता समझेगी, इसलिये वह अत्यन्त डरा हुआ था। नवाब-वजीर अथवा नापित भली भांति जानते थे कि रेजिडेंट से बिगाड़ कर लेना उनके लिये भला न होगा। सन्ध्या समय जब हम सब इकट्ठे हुए, तब सब ने मिलकर बादशाह से जी खोल कर उसके लिये क्षमा प्रार्थना की। निदान बादशाह ने थक कर कहा, "अच्छा, उस नमक-हराम की जांबखशी हो, लेकिन उसकी जागीर और जायदाद सब जब्त होजायं और एक पिंजरे में बन्द करके वह लखनऊ से बाहर निकाल दिया जाय।"

यह आज्ञा दी और नवाब-वजीर को यह काम सपुर्द किया गया। इसी अवसर पर अवध के उत्तरी देश का एक मुसल्मान सरदार लखनऊ में आया हुआ था और वह सवेरेही अपने देश

को जाने वाला भी था। यह विचार ठहरा कि बखतावरसिंह को कैद करके इसीके साथ लखनऊ के बाहर भेज दिया जाय, परन्तु इतने पर भी बादशाह संतुष्ट न हुए और बोले, 'उसकी ऐसी बे-इज़्ज़ती होना चाहिये, जैसी आज तक किसी राजा की न हुई हो। उसकी पगड़ी, कपड़े, तलवार और पिस्तौल सब ले आओ।'

बादशाह की आज्ञानुसार ये सब वस्तुएं सम्मुख आईं। हिन्दुओं का ऐसा विश्वास है कि किसीकी पगड़ी का अपमान करना स्वतः उस व्यक्ति के अपमान केही तुल्य है। अस्तु एक मेहतर बुलवाया गया और वहीं हमलोगों के सम्मुख तत्काल उस मेहतर ने प्रसन्नतापूर्वक उस पगड़ी को भ्रष्ट कर दिया, तब बादशाह का हृदय शीतल हुआ। मेहतर का प्रसन्नतापूर्वक इस कार्य्य को करने में यह कारण था कि उसकी छुई हुई वस्तु को फिर कोई न लेता, किन्तु वह उसीको मिल जाती थी, जिसे फिर धोकर सुखा लेने के पश्चात् वह प्रायः त्योहारों के दिनों में अपने और अपनी स्त्री के पहिनने के काम में लाया करता था।

फिर तलवार लाई गई, जिसे एक बलवान लोहार ने तोड़ कर टुकड़े टुकड़े कर डाला। अब तमंचा आया और लोहार उसे भी हथौड़ा मार कर तोड़ाही चाहता था कि उसे यह ध्यान हुआ कि स्यात् तमंचा भरा हुआ न हो और जो देखा तो वस्तुतः भराही पाया, तब वह रुक गया। कहीं बादशाह की भी दृष्टि उसके रुकने पर जा पड़ी और वे उसका कारण भी चट समझ गए। बादशाह ने क्रुध होकर पूछा, 'क्या वह भरा हुआ है?'

एक आपदा से छुट्टी नहीं पाई थी कि दूसरे ने आ घेरा। देखिये किस्मत क्या गुल खिलाती है।

पुस्तक मिलने का पता—

ठाकुरप्रसाद खत्री

मु० सिद्धेश्वरी – बनारस सिटी ।

Registered under Act XXV of 1867.